फरवरी
2025

धर्म एवं अध्यात्म के तत्त्वज्ञान का वैज्ञानिक विश्लेषण

अखण्ड ज्योति

वर्ष 89 | अंक – 2 | प्रति – ₹ 25 | ₹ 300 वार्षिक

9 ▶ महाशिवरात्रि का महापर्व
16 ▶ धर्म और मनोविज्ञान का समन्वय
27 ▶ मानवीय हृदय की पुकार हैं राग
43 ▶ समझदारों की नासमझी

सत्कर्मों से दुर्भाग्य भी बदल सकता है।

स्मरण रखिए वर्तमान ही प्रधान है। पिछले जीवन में आप भले या बुरे कैसे भी काम करते रहे हों, यदि अब अच्छे काम करते हैं तो चंद भोग्य बन गए फलों को छोड़कर अन्य संचित पाप हतवीर्य हो जाएँगे और यदि उनका कुछ परिणाम हुआ भी तो बहुत ही साधारण, स्वल्प कष्ट देने वाला एवं कीर्ति बढ़ाने वाला होगा। शिवि, दधीचि, हरिश्चंद्र, प्रह्लाद, ध्रुव, पांडव आदि को पूर्व भोगों के अनुसार कष्ट सहने पड़े, पर वे कष्ट अंततः उनकी कीर्ति को बढ़ाने वाले और आत्मलाभ कराने वाले सिद्ध हुए। सुकर्मी व्यक्तियों के बड़े-बड़े पूर्व पातक स्वल्प दुःख देकर सरल रीति से भुगत जाते हैं। पर जो वर्तमान काल में कुमार्गगामी हैं, उनके पूर्वकृत सुकर्म तो हीनवीर्य हो जाएँगे और जो संचित पापकर्म हैं, वे सिंचित होकर परिपुष्ट और पल्लवित होंगे, जिससे दुःखदायी पापफलों की श्रृंखला अधिकाधिक भयंकर होती जाएगी।

हमें चाहिए कि सद्विचारों को आश्रय दें और सुकर्मों को अपनाएँ, यह प्रणाली हमारे बुरे भूतकाल को भी श्रेष्ठ भविष्य में परिवर्तित कर सकती है।

फरवरी –1950 (पृष्ठ-19)

संस्थापक-संरक्षक
वेदमूर्ति तपोनिष्ठ
पं० श्रीराम शर्मा आचार्य
एवं
शक्तिस्वरूपा
माता भगवती देवी शर्मा
संपादक
डॉ० प्रणव पण्ड्या
कार्यालय
बिरला मंदिर के सामने मथुरा-वृंदावन रोड जयसिंहपुरा, मथुरा (281003)
दूरभाष नं० (0565) 2403940, 2972449
2412272, 2412273
मोबाइल नं० 9927086291, 7534812036
7534812037, 7534812038, 7534812039
समय—प्रातः 10 से सायं 6 तक
कृपया इन मोबाइल नंबरों पर एस. एम. एस. न करें।
नया ई-मेल :
akhandjyoti@akhandjyotisansthan.org

वर्ष	:	89
अंक	:	02
फरवरी	:	2025
माघ-फाल्गुन	:	2081
प्रकाशन तिथि	:	01.01.2025

वार्षिक चंदा

भारत में सामान्य डाक से	:	300/-
भारत में रजिस्टर्ड डाक से	:	540/-
विदेश में	:	2800/-

आजीवन (बीसवर्षीय)

भारत में सामान्य डाक से : 6000/-
भारत में रजिस्टर्ड डाक से (वार्षिक) : +240/-

क्रमश : अखण्ड ज्योति परिवार

'अखण्ड ज्योति' जन-मन की जीवन ज्योति बनने लगी। प्रतिमास प्रकाशित होने वाली इस पत्रिका से प्रेमी पाठक जुड़ने लगे। इसके लेखों में उन्हें उनके जीवन की समस्याओं का मार्गदर्शन मिलता। इस पत्रिका का हर महीने उनके घर पहुँचना उन्हें दैवी आशीर्वाद लगने लगा। इसे पढ़ने वाले प्रायः सभी यह अनुभव करने लगे कि यह पत्रिका कोई कागजों का छपा हुआ पुलिंदा नहीं है। इसके काले अक्षरों में संपादक की चेतना का उजला प्रकाश झिलमिलाता है।

इसका हर लेख उन्हें जीवन-दीप लगता। पढ़ने वाले सभी यह महसूस करते कि घर-आँगन में केवल कागज की छपी पत्रिका नहीं आती है, बल्कि इसके लेखों के रूप में अनेक जीवन-दीपों का समूह आकर, घर में अध्यात्म-ज्ञान की दीपमालिका के रूप में प्रकट हो जाता है। पत्रिका के संपादक उन्हें मार्गदर्शक पिता लगने लगे। उनसे पत्र-व्यवहार होने लगा। पत्रिका और पत्र, दोनों मिलकर उन्हें भावनाओं में भिगोने लगे। प्यार का ज्वार उफनता और व्यापक होता गया।

प्यार और अपनत्व के ये धागे आपस में अनायास जुड़ने लगे। इनकी मजबूती बढ़ती गई। प्रेमी पाठकों की आपस में मुलाकातें होने लगीं। ये पाठक संपादक के मार्गदर्शन में साधना करने लगे। उनका मथुरा आवागमन आरंभ हुआ। तब अखण्ड ज्योति पत्रिका का प्रकाशन केंद्र 'अखण्ड ज्योति संस्थान' बन गया। यहाँ रहने वाले-सभी आने वाले पत्रिका के संपादक युगऋषि के साथ परिवार के प्रेम में बँधने लगे। अखण्ड ज्योति के पाठक अब केवल पाठक न होकर साधक भी हो गए और उन सबका समवेतस्वरूप 'अखण्ड ज्योति परिवार' बन गया। अखण्ड ज्योति पत्रिका के संपादक अब केवल संपादक न रहे, अब वे सबके प्राणप्रिय परमपूज्य गुरुदेव बन गए। ❐

▶'नारी सशक्तीकरण' वर्ष◀

विषय सूची

❋ आवरण—1 1
❋ आवरण—2 2
❋ क्रमश: अखण्ड ज्योति परिवार 3
❋ **विशिष्ट सामयिक चिंतन**
जलवायु-परिवर्तन एवं बिगड़ता मौसम 5
❋ सर्वशक्तिशाली हैं ईश्वर 8
❋ **पर्व विशेष—महाशिवरात्रि पर्व**
महाशिवरात्रि का महापर्व 9
❋ अविस्मरणीय आदर्शों की प्रेरणापुंज
देवी अहिल्याबाई होल्कर 12
❋ हेमू विक्रमादित्य की ऐतिहासिक हवेली 15
❋ धर्म और मनोविज्ञान का समन्वय 16
❋ संपूर्ण स्वास्थ्य का लाभ 19
❋ हिम मानव का रहस्य 22
❋ इच्छाशक्ति को कुछ ऐसे बढ़ाएँ 25
❋ मानवीय हृदय की पुकार हैं राग 27
❋ बच्चों से सम्मान के अधिकारी बनें 30
❋ **पूज्य गुरुदेव जैसा मैंने देखा-समझा—29**
सत्याग्रहियों की सेना में 33
❋ शिक्षा में जीवन प्रबंधन के प्रयोग 34
❋ **ब्रह्मवर्चस-देव संस्कृति शोध सार—190**
प्रज्ञायोग का दर्शन 37
❋ **युगगीता—297**
कर्म नहीं कर्मफल की इच्छा का त्याग 41
❋ **परमवंदनीया माताजी की अमृतवाणी**
समझदारों की नासमझी (पूर्वार्द्ध) 43
❋ **विश्वविद्यालय परिसर से—236**
गीता का सार और महिमा 49
❋ **साधना शताब्दी-विशिष्ट लेखमाला**
औषधीय-वनस्पतियों में संजीवनी प्रकाश 56
❋ **अपनों से अपनी बात**
ज्योति अब ज्वाला बनेगी 59
❋ **अपनों से अपनी बात**
अविस्मरणीय, अद्भुत एवं अलौकिक
कार्यक्रमों की शृंखला 62
❋ महाकाल (कविता) 66
❋ आवरण—3 67
❋ आवरण—4 68

आवरण पृष्ठ परिचय

उल्लास के साथ वसंत का आगमन

फरवरी-मार्च, 2025 के पर्व-त्योहार

रविवार	02 फरवरी	वसंत पंचमी/पूज्य गुरुदेव बोध दिवस
मंगलवार	04 फरवरी	सूर्य सप्तमी
शनिवार	08 फरवरी	जया एकादशी
बुधवार	12 फरवरी	संत रविदास जयंती
सोमवार	24 फरवरी	विजया एकादशी
बुधवार	26 फरवरी	महाशिवरात्रि
शनिवार	01 मार्च	रामकृष्ण परमहंस जयंती/ फुलरिया दूज
शुक्रवार	07 मार्च	होलाष्टक
सोमवार	10 मार्च	आमलकी एकादशी
गुरुवार	13 मार्च	होलिका दहन/पूर्णिमा
शुक्रवार	14 मार्च	होली धूलिवंदन
शुक्रवार	21 मार्च	शीतला सप्तमी
मंगलवार	25 मार्च	पापमोचनी एकादशी 'स्मा.'
बुधवार	26 मार्च	पापमोचनी एकादशी 'वै.'
रविवार	30 मार्च	नवसंवत्सरारंभ/ चैत्र नवरात्रारंभ
सोमवार	31 मार्च	गणगौर

★ **यह पत्रिका आप स्वयं पढ़ें तथा औरों को पढ़ाएँ। कुछ समय के बाद किसी अन्य पात्र को दे दें, ताकि ज्ञान का आलोक जन-जन तक फैलता रहे।** —*संपादक*

▶ 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◀

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

आपको सादर प्रणाम

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel

Shantikunj Rishi Chintan को Subscribe करने के लिए क्लिक कीजिये और Bell 🔔 बटन को जरूर दबाएं ताकि आप को नोटिफिकेशन मिलते रहे।

Shantikunj Rishi Chintan के विडियो को अपने मित्रों के साथ शेयर जरूर करें।

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel के वीडियो युग निर्माण मिशन के लिए समर्पित है! हमारा एकमात्र उद्देश्य परम पूज्य गुरुदेव के विचारों को जन-जन तक पहुंचाने का है।

आप इन वीडियो को डाउनलोड करके मिशन की गरिमा के अनुरूप प्रयोग कर सकते हैं।

धन्यवाद

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

☞ शांतिकुंज हरिद्वार के Official WhatsApp Channel awgpofficial Shantikunj चैनल को Follow करने के लिए Link पर Click करें https://whatsapp.com/channel/0029VaBQpZm6hENhqlhg453J

Shantikunj WhatsApp:- शांतिकुंज की गतिविधियों से जुड़ने के लिए 8439014110 पर अपना नाम लिख कर WhatsApp करें

आप भी हमारे साथ जुड़ कर इस विचार क्रांति योजना में सहभागी अवश्य बनें।

Rishi Chintan

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

विशिष्ट सामयिक चिंतन

जलवायु-परिवर्तन एवं बिगड़ता मौसम

जलवायु-परिवर्तन अब एक कठोर सत्य बन गया है, जिसके भयावह परिणाम सामने आ रहे हैं। वर्ष—2024 इसके विप्लवी मंजर का साक्षी रहा है। पूरे वर्ष भर भारत एवं विश्व के कोने-कोने में मौसम की चरमता से जुड़ी घटनाओं ने मानव जाति को इसके भयावह खतरे से चेता दिया है, जिससे समय रहते आवश्यक सबक लेने की आवश्यकता है। इसका मुख्य कारण मानव निर्मित है। प्रकृति का हर घटक प्रदूषण की गंभीर चपेट में है। जिसके परिणाम ग्लोबल वार्मिंग से लेकर इससे उपजे प्रकृति प्रकोपों के रूप में स्पष्ट हैं।

आधुनिक शोधों से स्पष्ट है कि यदि ग्रीनहाउस गैस-उत्सर्जन को घटाया नहीं गया तो दो दशकों में तबाही सुनिश्चित है, जिसकी चपेट में 70% जनसंख्या आने वाली है। इसके अंतर्गत चरम तापमान से लेकर भयंकर बारिश संबंधी परिवर्तन का सामना करना होगा।

इसके परिणामस्वरूप अभूतपूर्व परिस्थितियों और भयावह घटनाओं का खतरा बढ़ रहा है। मई-जून माह में असह्य हीट वेव्ज की विभीषिका सभी देख चुके हैं और जुलाई से सितंबर माह में मानसून सीजन के बीच अत्यधिक वर्षा के साथ जुड़े प्राकृतिक प्रकोपों के मंजर के भी सभी साक्षी रहे हैं।

'नेचर' जियोसाइंस पत्रिका में प्रकाशित शोध पत्र से स्पष्ट होता है कि कैसे ग्लोबल वार्मिंग, मौसम में सामान्य बदलावों के साथ मिलकर चरम तापमान और बारिश, दोनों में बहुत तीव्र परिवर्तन की एक दशक जितनी लंबी अवधि पैदा कर सकता है।

शोधकर्त्ताओं के अनुसार, विशेषकर एशिया में वायु-प्रदूषण को तेजी से कम करना बेहद आवश्यक है। गहरे वायु-प्रदूषण के कारण गरमी से जुड़ी चरम परिस्थितियों में तेजी से वृद्धि हो रही है, जो एशियाई ग्रीष्मकालीन मानसून को प्रभावित कर रही हैं।

मानसून के मौसम का भारत में विशेष महत्त्व रहता है। दक्षिण पूर्व से समुद्री हवाएँ नमी को समेटे हुए क्रमिक रूप से उत्तर की ओर बढ़ती हैं और पर्वतों से टकराकर बड़े भू-भाग को सिंचित करती हैं। इस रूप में गरमी के चरम पर सूखी धरती को इस मौसम का बे-सब्री से इंतजार रहता है, लेकिन इसमें अब अनियमितता से लेकर इसके साथ पश्चिमी विक्षोभ के जुड़ने के कारण भू-भाग के कई क्षेत्रों में प्रकृति का तांडव कहर बनकर बरस रहा है।

वर्ष—2024 का मानसून सीजन, जो सामान्यतया जून से सितंबर तक चलता है, रिकॉर्ड किए गए इतिहास में सबसे तीव्र एवं असामान्य रहा है। 2024 के मानसून सीजन में अगस्त माह के अंत में चक्रवात असना का निर्माण भी हुआ, जो अपने समय और स्थान के देखते हुए एक असामान्य घटना रही। सन् 1981 के बाद से उत्तरी हिंद महासागर क्षेत्र में अगस्त में बनने वाला यह पहला चक्रवात था और सन् 1976 के बाद से अरब सागर में पहला चक्रवात था।

चक्रवात गुजरात के ऊपर एक गहरे अवसाद से उत्पन्न हुआ। हालाँकि तेज हवा और कुछ बारिश के साथ यह चक्रवात बिना अधिक क्षति पहुँचाए ओमान की ओर बढ़ गया। 30-31 जुलाई, 2024

को केरल के वायनाड (Bianad) क्षेत्र में भयंकर भूस्खलन एवं बाढ़ की लोमहर्षक घटना घटित हुई।

भूस्खलन भारी बारिश के कारण हुआ, जिससे पहाड़ी के दोनों तट बह गए और नीचे के क्षेत्रों में भारी तबाही का कारण बने। केरल के इतिहास में यह सबसे भयावह आपदाओं में से एक था, जिसमें 336 लोग मारे गए, 397 घायल हुए और 78 लोग विलुप्त हुए। विशेषज्ञों द्वारा वायनाड की आपदा को 90% मानव निर्मित माना जा रहा है, हालाँकि जलवायु-परिवर्तन की भी इसमें भूमिका रही है।

इसी बीच 1 अगस्त के आस-पास हिमाचल में लगातार बारिश एवं बादल फटने की घटनाओं के साथ कई क्षेत्रों में खंड प्रलय के दृश्य सामने आए; जिसमें सोलांग नाला, दुंधी नाला में बादल फटने के साथ मलाना बाँध का फूटना अप्रत्याशित मंजर थे। इसकी जलराशि पंडोह डैम में जिस तरह विकराल रूप में निस्सृत हो रही थी, वह अभूतपूर्व था।

इसी तरह अगस्त के पहले सप्ताह में ही श्रीखंड कैलास क्षेत्र में बादल फटने से निरमंड, रामपुर, झाकड़ी, शिमला में भारी तबाही का मंजर दिखा। लगा जैसे भोलेनाथ का कोप कुपित प्रकृति की मार के रूप में बरस रहा हो। अगस्त-सितंबर माह में उत्तराखंड-केदारनाथ में भी चारधाम यात्रा सीजन के दौरान जून—2013 की त्रासदी की यादें ताजा हो गईं, जिसमें बादल फटने के साथ गौरीकुंड में भयानक मंजर देखने को मिला था।

अगस्त माह में ही त्रिपुरा में बाढ़ से 31 लोगों की मौत हुई और 3, 243 घर नष्ट हो गए या बुरी तरह से क्षतिग्रस्त हो गए और अन्य 17,046 आंशिक रूप से क्षतिग्रस्त हुए। 4 सितंबर को गुजरात में इस मौसम की 118% मानसून वर्षा हुई, जिसमें आई बाढ़ से बुनियादी ढाँचे और फसलों का भारी नुकसान हुआ तथा कम-से-कम 20,000 लोगों को स्थानांतरित होना पड़ा।

इन सभी प्राकृतिक आपदाओं में जो कारण हैं, वे कुछ इस प्रकार स्पष्ट हो रहे हैं—प्रकृति से छेड़खान, वृक्षों का कटाव, अमानवीय भवन निर्माण, सड़कों के लिए पहाड़ों व भूमि की कटाई और उत्खनन। इनके साथ उत्पन्न जलवायु-परिवर्तन एवं ग्लोबल वार्मिंग के दुष्प्रभाव पूरे विश्व को अपनी चपेट में ले रहे हैं। आश्चर्य नहीं कि अगस्त-2024 में उत्तराखंड में बरफ से बना ओम पर्वत विलुप्त हो गया, जिस घटना ने सबको चकित किया और भावुक भी; क्योंकि यह पर्वत सनातन धर्म के लोगों की आस्था से जुड़ा हुआ है।

भारत, चीन और नेपाल की सीमा से लगा हुआ ओम पर्वत समुद्र से लगभग 5,900 मीटर ऊँचाई पर है। यह पर्वत कैलास मानसरोवर यात्रा का एक महत्त्वपूर्ण पड़ाव भी है। चीन सीमा से सटे लिपुलेख तक सड़क बनने के बाद यहाँ पर्यटकों की संख्या भी बढ़ गई है। विशेषज्ञों का मानना रहा कि यह घटना वैश्विक और स्थानीय पर्यावरणीय संकट का संकेत है। जलवायु-परिवर्तन को इसका प्रमुख कारण माना जा रहा है।

अल्मोड़ा स्थित जीबी पंत संस्थान में 'सेंटर फॉर एनवायरमेंटल असेसमेंट एंड क्लाइमेट चेंज सेंटर' के विशेषज्ञों के अनुसार विश्व भर में मौसम परिवर्तन के दुष्प्रभाव देखने को मिल रहे हैं। ओम पर्वत भी इससे अछूता नहीं रह गया है। वैश्विक तापमान बढ़ रहा है और ग्लेशियर इससे सबसे अधिक प्रभावित हो रहे हैं। साथ ही जंगलों में आग की घटनाएँ इसके प्रभाव को और भयावह कर रही हैं।

जंगल की आग से निकला ब्लैक कार्बन, ग्लेशियर पर प्रभाव डालता है। ग्लेशियर के अच्छे

स्वास्थ्य के लिए उसके नीचे के बुग्यालों में अच्छी घास होनी चाहिए। अल्पाइन क्षेत्र में वनों का स्वास्थ्य अच्छा होना चाहिए। इन सबसे तापमान संतुलित रहता है। यूएन की 2022 की रिपोर्ट के अनुसार, हिमालयी क्षेत्र के एक-तिहाई ग्लेशियर ग्लोबल वार्मिंग की चपेट में हैं।

तापमान बढ़ने से सन् 2000 से ग्लेशियरों के पिघलने की दर बढ़ गई है। ग्लेशियरों से 58 बिलियन टन बरफ हर वर्ष कम हो रही है। यह फ्रांस और स्पेन में होने वाले पानी की कुल खपत के बराबर है। वहीं दि इंटरनेशनल सेंटर फॉर इंटीग्रेटेड माउंटेन डेवलपमेंट के अनुसार तापमान बढ़ने की दर हिंदुकुश हिमालयी क्षेत्र में वैश्विक दर से काफी अधिक है। वर्ष 2023-24 की सरदियों में समूचे क्षेत्र की बरफबारी में रिकॉर्ड कमी देखी गई है। विशेषकर पश्चिमी हिमालय में कम या बिलकुल बरफबारी नहीं हुई। इंडियन मीटियोरोलोजिकल डिपार्टमेंट की वर्ष—2023 की रिपोर्ट के अनुसार बीते साल मानसून के बाद अक्टूबर, नवंबर और दिसंबर में उत्तराखंड में तापमान में दो डिगरी की वृद्धि मापी गई। देश के अन्य क्षेत्रों की तुलना में हिमालय में तापमान अधिक तेजी से बढ़ रहा है, इसे एलिवेटेड इफेक्ट कहा जाता है।

जैसे-जैसे ऊँचाई बढ़ती है, तापमान भी बढ़ता जाता है। इसी कारण मौसमी बरफ अब गरमियों के साथ सरदियों और वसंत ऋतु में भी तेजी से पिघल रही है। ओम पर्वत पर बरफ का विलुप्त होना इसी का प्रमाण माना जा रहा है।

कुल मिलाकर जलवायु-परिवर्तन एवं मौसम की मार के परिणाम भयावह हैं। समय रहते इसके प्रभाव को कम करने के लिए हमें प्रयास करने होंगे।

कार्बन-उत्सर्जन को कम करना होगा, परिवहन में हरित साधनों का उपयोग बढ़ाना होगा। अधिक-से-अधिक वृक्षों का आरोपण करना होगा। भू-जल का संरक्षण करना होगा, प्राकृतिक ऊर्जा के स्रोतों का उपयोग बढ़ाना होगा और प्रकृति को साथ लेकर चलने वाले कृषि एवं समावेशी विकास को अपनाना होगा।

सर्वोपरि रूप से प्रकृति के प्रति संवेदनशील रवैया अपनाते हुए अपनी जीवनशैली को सुधारना होगा। ❑

पत्रिका रजिस्टर्ड मँगाएँ

डाक-अव्यवस्था के कारण प्रायः अखण्ड ज्योति न मिलने की शिकायत बनी रहती है। अतः सदस्यों की सुविधा के लिए रु. 240/—वार्षिक (20/—प्रतिमाह) शुल्क अतिरिक्त भेजने पर रजिस्टर्ड डाक से भेजने की व्यवस्था जनवरी—2025 से प्रारंभ की जा रही है।

जो सदस्य इस सुविधा का लाभ उठाना चाहें, वे अपना पूरा नाम, पता, सदस्यता क्रमांक, मोबाइल नंबर सहित रु. 240/—(रु. 20/—मासिक) अतिरिक्त भेजकर सूचना अवश्य दें। यह सुविधा वार्षिक सदस्य, बीसवर्षीय सदस्य एवं 2 से 14 तक इकट्ठी पत्रिका मँगाने वालों के लिए उपलब्ध है।

2 से 14 तक पत्रिका मँगाने वालों को भी मात्र रु. 240/—(20/—प्रतिमाह) ही देना होगा।

सर्वशक्तिशाली हैं ईश्वर

ईश्वर जिस तत्त्व का नाम है वे हममें ऐसी गुण-गरिमा विकसित करने में समर्थ हैं, जिसके द्वारा मनुष्य में छिपी प्रतिभा विकसित होकर पूर्ण प्रकाश की दिशा में बढ़ चलती है। हमें जीवन को इस रूप में ग्रहण करना चाहिए कि ईश्वर अपनी इच्छा को हमारे द्वारा पूरा करना चाहते हैं। वे हमारे भीतर विद्यमान सभी प्रकार के कषाय-कल्मषों को मिटाकर एक निर्द्वंद्व जीवन जीने की प्रेरणा प्रदान करते हैं।

ऐसे ईश्वर कभी हमसे विमुख नहीं हो सकते, जिनके द्वारा मनुष्य हर प्रकार की कठिनाई से पार पाकर जीवन को सौंदर्यपूर्ण बनाता है। हम उनके अनुसार स्वयं को सुगठित करें, यही जीवन-साधना है। जो ऐसा कर सके, उसे किसी चीज का अभाव नहीं सताता है। उसका जीवन सदा प्रकाश के पथ पर चलते हुए महान उत्कर्ष को प्राप्त करता है।

ऐसा व्यक्ति ही धन्य है, जिसने अपने भीतर से समस्त विकारों को समाप्त कर दिया हो—जो इस संसार के बंधन से परे अपनी स्वच्छंद गति को प्राप्त कर गया हो। हमारा जीवन तभी महान बनेगा जब उसे ईश्वर की दी हुई प्रणाली पर चलने का अवसर मिल सके। हम उन ईश्वर को ही धारण करें, सदैव उनके मार्गदर्शन पर चलते रहें तथा कभी उनके विलग होने का प्रयास न करें।

हमारी आत्मा तभी उन्हें स्वीकार पाएगी, जब हम पूर्णरूपेण ईश्वर-समर्पित हों। उन्हें अपने भीतर से प्रवाहित होने दें। वे जो कुछ कराना चाहें, उनके मार्ग का अवलंबन लेकर आगे बढ़ें। जब तक ईश्वर हमारे साथ हैं, हमें किसी दु:ख-द्वंद्व में फँसने की आवश्यकता नहीं।

हमारा जीवन स्वत: उस प्रकाश को उत्सर्जित करेगा, जिसके बाद हमें किसी प्रकार भी इस संसार के परवश न रहना पड़े। जो इसे समझ जाता है, उसे अपना दु:ख तिनके के समान तथा विश्व-समुदाय में फैली अपनी ही आत्मप्रेरणा के दर्शन होने लगते हैं।

ऐसा व्यक्ति सचमुच में धन्य है, जिसने ईश्वर को अपना सहचर बनाकर उन्हीं के अनुरूप कार्य करने की ठान ली हो। हमारा जीवन तभी अपने ईश्वरप्राप्ति के उद्देश्य की पूर्ति कर सकता है, जब उसके भीतर से एक तड़प उठे, व्याकुलता हो कि हमें तो मात्र ईश्वर की सेवा में ही स्वयं को लगाना है।

जब हम ऐसा कर लेंगे तो वह सर्वशक्तिशाली सत्ता अपने एकाधिकार में हमारे संपूर्ण जीवन को ले एक नए ही रूप-रंग में दृष्टिगोचर होगी। तब वह एक कल्पना नहीं, बल्कि यथार्थ में हमें परिचालित करने वाली प्रेरणा बन जाएगी। इसी को ईश्वर समर्पण कहते हैं। जब तक हम व्यक्तिगत मतभावों में जीते हैं, हमारे भीतर जीवन को उन्नत बनाने की प्रेरणा नहीं तथा हम अंधकार में घिरे इस संसार के ही चंगुल में फँसे रहते हैं, तब तक महान उत्कर्ष का पथ प्रशस्त करना संभव नहीं।

अपनी सभी वृत्तियों को ईश्वर को सौंप दें, उन्हें ही अपने भीतर से कार्य करने दें तथा उनके द्वारा अपने भविष्य को उज्ज्वल बनाने की दिशा में बढ़ चलें। जब आप ऐसा करने में समर्थ हो जाएँगे तो ईश्वर की शक्ति स्वत: ही आपके भीतर से कार्य करने लगेगी एवं तब मार्ग में कोई अवरोध न रह जाएँगे। यही ईश्वरकृपा है। ❑

महाशिवरात्रि का महापर्व

फाल्गुने कृष्णपक्षे या तिथिः स्याच्चतुर्दशी।
तस्यो या तामसी रात्रिः सोच्यते शिवरात्रिका॥

फाल्गुन के कृष्णपक्ष की चतुर्दशी तिथि को आश्रय कर जिस अंधकारमयी रजनी का उदय होता है, उसी को शिवरात्रि कहते हैं। इस वर्ष यह महापुण्यदायी महाशिवरात्रि की वेला 26 फरवरी, बुधवार को आ रही है। वैसे तो हमारे शास्त्रों में प्रत्येक मास की कृष्ण चतुर्दशी को शिवरात्रि कहा गया है और स्वयं भगवान शिव इस चतुर्दशी तिथि के स्वामी हैं, परंतु महाशिवरात्रि का इन सबमें सर्वाधिक महत्त्व और महत्ता है।

ईशान संहिता में उल्लेख है कि भगवान शिव की प्रथम लिंगमूर्ति इसी तिथि की महानिशा में इस लोक में आविर्भूत हुई थी। शिव के अनन्य भक्तों-साधकों की दृष्टि में महाशिवरात्रि अपने इष्ट को प्रसन्न करने का अनुपम अवसर है। इस दिन भगवान शिव और उनके साथ आदिशक्ति की दिव्य शक्तियाँ एक साथ धरती पर आती हैं। इस दिन किया गया जप, तप, उपासना, ध्यान, व्रत, उपवास, कीर्तन—सब कुछ त्वरित फलदायी होते हैं। इसलिए शास्त्रों में इस महापर्व की अत्यंत महत्ता कही गई है।

भारतवर्ष की सनातन हिंदू परंपरा में अनेकानेक पर्व-त्योहार की पुनीत परंपराएँ विद्यमान हैं, परंतु उनमें से महाशिवरात्रि का सर्वाधिक व्यापक महत्त्व है। सूर्य, गाणपत्य, शैव, वैष्णव और शाक्त सभी के उपासक संप्रदाय भेद को त्यागकर इस दिन भोग और मोक्ष की कामना से शिवभक्ति में लीन हो जाते हैं। आखिर हों भी क्यों न? भगवान शिव का संकल्प है ही ऐसा अद्‌भुत।

वे ही सत्य, ज्ञान एवं अनंतरूप गुणातीत परब्रह्म हैं। अंततः शिवरूप ही तो नित्य, सनातन सबका मूलस्वरूप हैं। परात्पर ब्रह्म और परम आराध्य-दोनों सदाशिव ही हैं। उन्हीं के द्वारा, उन्हीं में सृष्टि लय होती है। यही रहस्य तो उनके तांडव नृत्य की अभिव्यक्ति का सार्थक बोध है— महाशिवरात्रि इसी रहस्यमयी अभिव्यक्ति से संयुक्त असंख्य शक्तियों से अनुदान-वरदान प्राप्त करने का सुलभ अवसर है।

महाशिवरात्रि के परम आराध्य के रहस्य एवं मर्म का जिन्हें थोड़ा भी भान है, वे इस दुर्लभ सुयोग पर अनेकविध साधन-साधना का अवलंबन कर सदाशिव की कृपा के पात्र बन जाते हैं, लेकिन जो उनके स्वरूप को समझने में असमर्थ हैं और विधि-विधान में अक्षम हैं—उनके प्रति भी भोलेनाथ सदाशिव की कृपा समान रूप से बरसती है। बस, उनका नामस्मरण, रूप का चिंतन और उनके प्रति भावभक्ति ही उनकी कृपा प्राप्त करने के लिए पर्याप्त है।

हमारे शास्त्रों में परमात्मकृपा के जितने भी उपाय व मार्ग-साधन हैं, उन सभी के द्वारा भगवान शिव की कृपा सहज लभ्य है। कर्म, ज्ञान, भक्ति रूपी साधन को सर्वोत्तम कहा गया है। कर्म में यज्ञ, हवन आदि श्रौत तथा वर्णाश्रम की मर्यादा से संबंधित स्मार्त कर्म अथवा व्रत, उपवास आदि धार्मिक कर्म—सभी तरह से शिवत्व की यात्रा और कृपा सुलभ हैं।

ज्ञान में तत्त्वमसि की सिद्धि का मार्ग यद्यपि दुर्गम है, परंतु जिन्होंने इंद्रियों को वश में कर लिया हो और समदृष्टि प्राप्त कर कर्म में निर्लिप्तता सिद्ध कर ली हो, ऐसे योगी-ज्ञानीजन के जीवन में शिवत्व का साकार हो उठना स्वाभाविक है।

भक्ति का साधन तो सबसे उत्तम और सरल है। श्रवण, कीर्तन, स्मरण—भक्ति के ये तीन रूप उपास्य के नाम की महिमा से संबंधित हैं। पादसेवन, अर्चन, वंदन—ये तीन उपास्य के स्वरूप की महिमा को दरसाने वाले हैं तथा दास्य, सख्य और आत्मनिवेदन—ये तीन प्रकार की भक्ति उपासक की उपास्य के प्रति भावना और समर्पण की महिमा से संबंधित हैं।

इन नवधा भक्ति के किसी भी रूप को अपना कर आराध्य शिव की कृपा सहज प्राप्त की जा सकती है। भगवान शिव की प्रसन्नता एवं कृपा की आकांक्षा में उनके नाम, स्वरूप और भक्ति को प्रदर्शित करने वाली स्तुतियों, मंत्रों, ऋचाओं, प्रार्थनाओं से भारतीय वायुमंडल भरा पड़ा है। भारत के वैदिक-लौकिक, दोनों साहित्य शिवभक्ति के रस में सराबोर हैं।

हिंदू संस्कृति में सर्वाधिक प्रचलित पौराणिक रूपकों, आख्यायिकाओं तथा श्रुतिपरक स्तुतियों में शिवभक्ति का विशद-व्यापक रूप मौजूद है। वैदिक विशेषणों का सारगर्भित रहस्य भी पौराणिक दृष्टांतों में ज्यादा स्पष्टता से उजागर है। यजुर्वेद संहिता में तो अनेक अध्याय शिव-स्तुतिपरक ही हैं।

इन्हीं के आधार पर लौकिक साहित्य में भगवान शिव के विविध रूपों का चित्रण हुआ है। शिव की महत्ता लौकिक, अलौकिक और पारमार्थिक जगत् में परम रक्षक और सर्वविध कल्याणकर्त्ता के रूप में विस्तृत है। हमारे इस लौकिक पारंपरिक जगत् में भगवान शिव को तमोगुण का अधिष्ठातृ देव व संहारशक्ति का नियामक माना जाता है। इसलिए जीवन के अंतः-बाह्य कष्ट और अंधकार से निवृत्ति की पुकार शिवभक्ति की ओर सहज प्रवाहित हो जाती है।

शिव ही एकमात्र ऐसे आराध्य हैं, जहाँ सृष्टि और प्रलय, सौम्यता और प्रचंडता, शिवत्व और रुद्र, जीवन और मृत्यु जैसे विरोधी तत्त्व एकाकार हैं। इन्हीं विशेषताओं को धारण करने से उनका स्वरूप भी अत्यंत अद्‌भुत है।

उनका वाहन नंदी धर्म का प्रतीक है, वह शांत-सौम्यता को लिए है। स्वयं भोलेनाथ रूप स्मित-सौम्यता को धारण किए सृष्टि की बालक्रीड़ा से आनंदित हैं।

सिर पर जटा-मुकुट, द्वितीया के चंद्र का आभूषण, माथे पर तृतीय नेत्र, नाग का यज्ञोपवीत, गले, कान, मणिबंध, पाद-गुल्फ और कटि में सर्पमालाओं के आभूषण—सभी दृष्टि से भीषणता धारण करते हुए भी परम सुंदर और परम कल्याणकारी हैं भक्तों के भोलेनाथ।

आदिकाल से ऐसे ही निराले स्वरूप में प्रतिष्ठित भगवान शिव का जिस विधि भी बन पड़े, चिंतन, ध्यान, व्रत, उपवास, स्मरण आदि भक्तों को उनका मनोवांछित फल देने वाला होता है। महाशिवरात्रि की वेला में तो उनके अनुदानों-वरदानों की सहज सिद्धि हो जाती है।

इस महानिशा में महाकाल अपनी समस्त विभूतियों-शक्तियों को भक्त के कल्याणार्थ इस धरा-धाम पर बिखेर देते हैं। भक्त जन भी इस दिन अपनी पात्रता-पुरुषार्थ के अनुरूप उनकी सहज कृपा के भागी बन कृतार्थ होते हैं। चहुँओर शिवभक्ति का वातावरण छाया रहता है।

हिंदू समाज में तो इस दिन व्रत, उपवास का अत्यंत प्रचलन रहा है। सभी शिवालयों में विशेष

पूजन-अर्चन, अभिषेक आदि से आशुतोष की उपासना होती है। शास्त्रों में पूजा-उपासना के जितने भी विधान-विधियाँ हैं—उन सभी का, अपनी-अपनी रुचि एवं परंपरा-अनुसार अवलंबन कर महाशिवरात्रि पर्व को मनाए जाने की परंपरा है। वैसे साधना-उपचारों में तो पूजा के पाँच सोपान बताए गए हैं—अभिगमन, उपादान, योग, स्वाध्याय और इज्या।

अपने आराध्य देव के विग्रह स्थान को साफ करना, लीपना, निर्माल्य हटाना आदि कर्म 'अभिगमन' हैं। पुष्प, पत्र, अक्षत, गंध आदि पूजन-सामग्री को एकत्रित करना 'उपादान' है। इष्ट-आराध्य देव की आत्मरूप से भावना करना 'योग' है।

मंत्रार्थ का अनुसंधान करते हुए जप करना, सूक्त, स्तोत्र आदि का पाठ करना; गुण, नाम, लीला आदि का कीर्तन करना; तत्त्व शास्त्रों का अभ्यास आदि सब 'स्वाध्याय' हैं। साधनों-उपचारों के द्वारा अपने आराध्य देव की पूजा करना 'इज्या' है।

पूजा के ये पाँच सोपान क्रमशः सृष्टि, सामीप्य, सालोक्य, सायुज्य और सारूप्य—मुक्ति देने वाले कहे गए हैं। भगवान सदाशिव की पूजा-उपासना में एक रहस्य की बात यह है कि जहाँ एक ओर रत्नों से परिनिर्मित लिंगों की पूजा में अपार समारोह के साथ राजोपचार आदि विधियों से विशाल वैभव का प्रयोग होता है, वहाँ सरलता की दृष्टि से केवल शुद्ध जल, अक्षत, बिल्वपत्र और मुख से उच्चारित ध्वनि-वाद्य बम-बम से भी परिपूर्णता मानी जाती है और भगवान शिव की कृपा सहज उपलब्ध हो जाती है। इसीलिए तो वे उदार-शिरोमणि और आशुतोष कहलाते हैं।

शिवभक्त इस रहस्य से सुपरिचित होते हैं कि भोला-भंडारी शिव की कृपा सहज-सुलभ प्राप्त हो जाती है। अतः वे निरंतर उनकी भक्ति का उपाय करते रहते हैं। इन भक्ति-उपायों में महाशिवरात्रि व्रत को समझो शिवपूजा का महाव्रत है।

इस व्रत में उपवास, जागरण और भगवान शिव का पूजन-अर्चन प्रधान है। जो कोई भी शिव भक्ति से प्रेरित हो सच्चे-पवित्र मन से महाकाल शिव की पूजा अपनी-अपनी भक्ति के अनुसार करते हैं, उन सभी को इसका सुफल सुनिश्चित मिलता है।

सागरो यदि शुष्येत क्षीयेत हिमवानापि।
मेरुमन्दरशैलाश्च श्रीशैलो विन्ध्य एव च।
चलन्त्येते कदाचिद्वै निश्चलं हि शिवव्रतम्॥

—स्कंदपुराण

अर्थात 'चाहे सागर सूख जाए, हिमालय भी क्षय को प्राप्त हो जाए, मंदर, विंध्यादि पर्वत भी विचलित हो जाएँ, पर शिव व्रत कभी विचलित (निष्फल) नहीं हो सकता। इसका फल अवश्य मिलता है।' ❑

अखण्ड ज्योति पत्रिका हेतु बैंक खातों का विवरण

जमा रसीद की प्रति एवं विवरण ई-मेल, पत्र द्वारा भेजें; अन्यथा राशि का समायोजन नहीं हो पाएगा।

Beneficiary -	Akhand Jyoti Sansthan	I.F.S. Code	Account No.
S.B.I.	Ghiya Mandi Mathura	SBIN0031010	51034880021
P.N.B.	Chowki Bagh Bahadur, Mathura	PUNB-0183800	1838002102224070
I.O.B.	Yug Nirman Tapobhoomi, Mathura	IOBA0001441	144102000000006

विदेशी धन बैंक में सीधे जमा न करें, ड्राफ्ट द्वारा भेजें।

अविस्मरणीय आदर्शों की प्रेरणापुंज देवी अहिल्याबाई होल्कर

भारतीय संस्कृति की सनातन अवधारणा में नारी का स्वरूप दैवी एवं शक्तिस्वरूपिणी है। यहाँ सदैव पूज्यरूप में नारी गरिमा का प्रकटन विद्यमान रहा है। वैदिक ऋषिकाओं से लेकर आधुनिक युग तक नारी आदर्श के सनातन स्वरूप को साकार कर दिखाने वाले जीवन चरित्रों की सुदीर्घ श्रृंखला भारत के हर कालखंड के पृष्ठों पर विस्तीर्ण है।

इसी श्रृंखला में एक अप्रतिम, अद्वितीय, अद्भुत एवं सूर्य की दीप्ति की भाँति प्रखर तेजोमय देवी अहिल्याबाई होल्कर का जीवन चरित्र है। नारी जीवन में समाहित शक्ति, शौर्य, साहस, धैर्य, करुणा, वात्सल्य, प्रेम, कर्त्तव्यनिष्ठा, समर्पण, सेवा, पवित्रता, निश्छलता जैसे उच्चादर्श एक साथ उनके जीवन में प्रस्फुटित हो उठे हैं। धरा-धाम पर उनका कृतित्व असाधारण, अलौकिक और चिरप्रेरक है।

अलौकिक एवं ऐतिहासिक दृष्टि से देवी अहिल्याबाई का जीवन अविस्मरणीय आदर्शों का प्रेरणापुंज है। जैसे—घोर अशांत और युद्ध, विग्रह, लूट-मार से अस्थिर और भयभीत काल में एक शांत, खुशहाल और न्यायशील राज्य की प्रतिष्ठा करना, धार्मिक, सांस्कृतिक और सामाजिक क्षेत्र के कल्याणकारी कार्यों को करना, व्यक्तिगत जीवन के आंतरिक और बाह्य द्वंद्वों, कष्टों और संकटों का डटकर सामना करते हुए राज्य संचालन, सुव्यवस्था, प्रबंधन, कुशलता, न्यायप्रियता, क्षमाशीलता और निरंतर नीति एवं धर्मपरायण बने रहना—यह सब कुछ उनके जीवन को इतिहास के स्वर्णिम अक्षरों में अमर कर देने वाला चरित्र चित्रण है।

देवी अहिल्याबाई का प्रेरक जीवन-चरित्र सुनिश्चित ही प्रखर सूर्य की भाँति विश्व क्षितिज पर प्रकीर्ण है। अवतारतुल्य महान व्यक्तियों का जीवन चरित्र अथाह समुद्र की भाँति गहन और नभ की भाँति उन्नत होता है, ऐसे में उसकी थाह ले पाना किसी के लिए संभव नहीं है। फिर भी समुद्र से कीमती मोती और नभ से चमकते तारे का प्रकाश तो लभ्य हो ही जाता है। उनके जीवन चरित्र के संदर्भ में भी यही विचार मान्य होना चाहिए।

महान जीवन चरित्र को पढ़कर आत्मसात् करने का वैसे तो कोई सुनिश्चित विधान नहीं है, फिर भी जनसामान्य की सहजता के लिए उचित रीति यही है कि सर्वप्रथम उस चरित्र की पृष्ठभूमि और तत्कालीन देश-काल-परिस्थितियों को समझा जाए। दूसरे क्रम में जन्म संबंधी वैशिष्ठ्य और शिक्षा-दीक्षा की ओर दृष्टि डाली जाए। तीसरे क्रम में मौजूदा संकट, समस्याओं, चुनौतियों और इनके समाधानस्वरूप व्यक्तित्व एवं कृतित्व की ऊँचाई एवं आदर्श मानदंडों को जाना जाए तथा उसके बाद चतुर्थ क्रम आता है—विरासत का।

भावी पीढ़ी, समाज और विश्वमानव के लिए कौन-कौन से नए मूल्य, आदर्श, प्रेरणाएँ और मानदंडों की विरासत सौंपी किस व्यक्तित्व ने है, यह जानना भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। उक्त चारों क्रम से युक्त रीति का अनुसरण करने से विषय-वस्तु की स्पष्टता, जीवन चरित्र को समझने की व्यापकता और गागर में सागर की भाँति जीवन चरित्र के स्वरूप का महत्त्व सहज प्राप्त हो जाता है।

यह आश्चर्यजनक विडंबना है कि देवी अहिल्याबाई होल्कर जैसी अद्वितीय नारी जीवन की आदर्श और आधुनिक भारत की इस कीर्तिस्तंभ

की ओर इतिहासकारों, लेखकों, विचारकों की गति अत्यंत अल्प रही है, जिसके फलस्वरूप जनसमाज को देवी अहिल्याबाई के जीवन की बहुत कम ही जानकारी हो पाई है।

यद्यपि पूरा देश उनके धार्मिकस्थलों के नवोन्मेष और सांस्कृतिक एवं सामाजिक कल्याण के कार्यों का प्रत्यक्षीकरण कर उनके प्रति श्रद्धा, सम्मान और गौरव से पूरित है, परंतु फिर भी देखा जाए तो उनके जीवन चरित्र की व्यापकता के अनेकों महत्त्वपूर्ण और प्रेरणादायी पहलू अनछुए ही बने रहे हैं।

मध्य भारत के मालवा प्रांत की महारानी देवी अहिल्याबाई होल्कर का नाम भारतीय इतिहास के चरित्रनायक-नायिकाओं में स्वर्णिम अक्षरों में अंकित है। सुशासन और धर्मपरायणता के महान आदर्श के रूप में भारतीय संस्कृति की आत्मज्योति में वे अमर दीप्ति बनकर प्रतिष्ठित हो चुकी हैं। नारी जीवन की दिव्य गरिमा, शौर्य, साहस, न्याय, धर्म, संस्कृति और संवेदना की साकार मूर्तिमान उनकी अलौकिक जीवनगाथा सर्वथा अद्वितीय और प्रेरणापुंज है।

अहिल्याबाई का जन्म सन् 1725 ई. में औरंगाबाद जिले के चोट नामक ग्राम में मानकोजी शिंदे के घर हुआ था। बाल्यकाल के अनेक गुणों में से एक यह भी था कि वे जब तक पूजन और पुराणों की कथाओं का श्रवण नहीं करती थीं, तब तक भोजन भी ग्रहण नहीं करती थीं।

8-10 वर्ष की उम्र में मालवा साम्राज्य के मल्हार राव होल्कर के पुत्र खांडेराव से उनका विवाह हुआ और यहाँ से होल्कर साम्राज्य से उनका संबंध जुड़ा। गृहस्थी के संपूर्ण काम-काजों का निर्वहन करते हुए, साथ ही समय-समय पर राजकार्यों में भी सहयोग तथा नियमित कथाश्रवण, पूजन, दान आदि करने के कारण सभी के मनों में उनके प्रति अत्यंत आदर और सम्मान का भाव उत्पन्न हो गया था।

भारतीय इतिहास में ऐसा विलक्षण उदाहरण मिलना मुश्किल है, जहाँ सारी प्रजा अपनी रानी को मातृवत् देवी के रूप में देखती हो और स्वयं रानी अपनी प्रजा को पुत्रवत् स्नेह-संरक्षण और ममत्व लुटाती हों। यह केवल देवी अहिल्याबाई के राज में ही साकार दिखाई देता था।

महेश्वर उनकी राजधानी थी और पूरा राज्य तीन भागों में विभाजित था। पहला भाग सतपुड़ा के उस पार दक्षिण तक फैला था। दूसरा भाग सतपुड़ा के उत्तर का भाग, जो महेश्वर के चारों ओर फैला था, जिसे मध्य भाग भी कहा जाता है और तीसरा भाग महेश्वर से लेकर राजपुताने तक का उत्तरी भाग था।

देवी अहिल्याबाई ने लगभग 30 वर्ष तक अपने आज्ञाकारी और सच्चे सेवक तुकोजी राव होल्कर के सहयोग से होल्कर राज्य का शासन चलाया और सुशासन व्यवस्था, न्याय, नीति, आदर्श, धर्म, संस्कृति, समानता, एकता जैसे आदर्श मूल्यों को प्रत्यक्ष कर समूचे विश्व में एक अनुपम उदाहरण प्रस्तुत किया है।

देवी अहिल्याबाई के बहुआयामी जीवन के अनुरूप ही उनकी दिनचर्या भी विशेष थी। राजनीतिक कर्त्तव्य, परिवार-समाज के कार्य, धर्म-संस्कृति के पर्व और व्यक्तिगत जीवन के व्रत, उपवास, अनुष्ठान, दान-पुण्य—इन सभी पहलुओं का उनकी जीवनचर्या में समुचित स्थान था। सूर्योदय से पूर्व उठकर प्रातःकृत्यों से निवृत्त हो वे नियमित पूजन में बैठ जाती थीं।

पूजा के अंतिम चरण में श्रेष्ठ और योग्य ब्राह्मणों द्वारा पूजास्थान पर ही बैठे-बैठे पुराणों, रामायण-महाभारत आदि का श्रवण करती थीं। फिर राजमहल के द्वार पर सैकड़ों ब्राह्मणों को दान-दक्षिणा और भिखारियों को भिक्षा देने का क्रम होता था। सभी को अपने हाथों से दान देने के पश्चात यह भी नियम था कि प्रतिदिन कुछ ब्राह्मणों को, जिन्हें पहले से निमंत्रित कर दिया जाता था,

भोजन करातीं तब जाकर स्वयं सादा, सात्त्विक भोजन ग्रहण करती थीं।

भोजन-पश्चात कुछ समय विश्राम करना, फिर साधारण वेशभूषा में राजसभा पहुँचकर सायंकाल तक पूर्ण तन्मयता एवं सावधानी से राजकार्यों को संपन्न करती थीं। कहा जाता है कि उनकी राजसभा में बिना किसी मध्यस्थ के किसी को भी देवी अहिल्याबाई के करीब जाकर अपनी समस्या व दु:ख, कष्ट बताने की अनुमति थी।

सायंकाल अपनी राजसभा विसर्जित कर संध्याकाल में देवी अहिल्याबाई पुन: लगभग 3 घंटे की अवधि भजन-पूजन में व्यतीत करतीं। तत्पश्चात फलाहार ग्रहणकर राज्य के प्रधान सेवकों को बुलाकर राज्य प्रबंधन, व्यवस्था, आय-व्यय आदि अन्य महत्त्वपूर्ण बातों पर मंत्रणा-निर्देशन करने के उपरांत रात्रि 11 बजे के बाद ही शयनकक्ष में प्रवेश करती थीं। इसके अतिरिक्त राज्य के धर्म-संस्कृति संबंधी पर्व-त्योहारों, उत्सवों और समारोहों को भी वे अत्यंत भव्य रूप में मनाती थीं।

ऐसी दिव्य विलक्षणताओं से परिपूर्ण होने के कारण ही उनका व्यक्तित्व भारतीय नारी जीवन के एक महान आदर्श के रूप में प्रतिष्ठित और पूज्य है।

सच्चे अर्थों में देवी अहिल्याबाई का जीवन चरित्र भारतीय धर्म-संस्कृति में प्रकाशित आत्मा का पर्याय-प्रतीक है। व्यक्तिगत जीवन में दैनंदिन व्रत, उपवास, पूजा-अर्चना, शास्त्र श्रवण, सत्संग और तपस्विनी की दिनचर्या, वह भी जीवनपर्यंत और सार्वजनिक जीवन में देवस्थानों, तीर्थों, मंदिरों, कुआँ, तालाब, बावड़ी, जलाशय, धर्मशालाओं का निर्माण एवं उत्थान आदि उनके कार्य भारतभूमि पर चहुँओर सर्वत्र देखे जा सकते हैं।

उनके आंतरिक जीवन की डोर धर्मपरायणता से सराबोर रही और बाह्य जीवन का कृतित्व संस्कृति निष्ठा के प्राकट्य में आजीवन निरत रहा। एक ऐसा नारी जीवन जिसने साधारण परिस्थितियों में जन्म लिया, जिसने जटिल एवं कल्पना से भी परे विषमताओं के बीच जीवन चरित्र को आदर्श रूप में गढ़ा और भारतीय इतिहास में अनंत काल तक देदीप्यमान बने रहने वाले स्वर्णिम अध्याय को लिख डाला।

ऐसी अलौकिक, दिव्य और नारी आदर्श के शिखर पर आसन्न जीवन चरित्र की निर्मात्री देवी अहिल्याबाई ही हो सकती हैं, दूसरा कोई नहीं। भारत ही नहीं, अपितु संपूर्ण विश्व समाज उनके जीवन के राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक आदर्शों से प्रेरणा प्राप्त कर कल्याणकारी दिशा में प्रवृत्त हो—यही इष्ट सत्ता से प्रार्थना है। ❑

य ऐतां वेद गायत्रीं पुण्यां सर्वगुणान्विताम्।
तत्त्वेन भरतश्रेष्ठ स लोके न प्रणश्यति॥

—महाभारत, भीष्म पर्व 4/16

अर्थात सर्वगुणों से भरी माँ गायत्री को जो जानता है, उसका इस संसार में कभी अनिष्ट नहीं होता।

हेमू विक्रमादित्य की ऐतिहासिक हवेली

अफगानों एवं मुगलों के खिलाफ लगातार 22 लड़ाइयों में विजेता रहे सम्राट हेमचंद्र विक्रमादित्य की अनमोल स्मृतियों को अपने आँचल में सहेजे उनकी प्राचीन हवेली कलात्मक कारीगरी का नायाब नमूना भी है।

मध्यकालीन भारत के नेपोलियन कहे जाने वाले हेमू ने अपनी असाधारण प्रतिभा के बूते पर एक व्यापारी से प्रधानमंत्री एवं सेनाध्यक्ष की पदवी तक का ऐतिहासिक सफर एक अजेय सम्राट के तौर पर पूरा किया।

इस गौरवपूर्ण पहलू की तमाम स्मृतियाँ इस हवेली से जुड़ी हैं। महाभारतकालीन नगरी रेवाड़ी के कुतुबपुर नामक मुहल्ले में खड़ी यह ढाई मंजिला हवेली प्राचीन कलात्मक कारीगरी की जीती-जागती मिसाल है।

कलात्मक मुख्यद्वार, नक्काशी से सजी दीवारें तथा दुर्लभ पत्थरों पर आकर्षक कारीगरी अनायास लोगों को प्रभावित करती हैं। अंदर प्रवेश करते ही वर्गाकार चौक स्वागत करता है। चहुँओर कलात्मक नक्काशी मन मोह लेती है।

बरामदे व कक्ष की विशालता से कभी रही इसकी भव्यता का अंदाजा सहज ही लगाया जा सकता है। प्रथम तल पर कुल मिलाकर छोटे-बड़े एक दर्जन कक्ष एवं चार दलान हैं।

इनके पीछे एक कक्षनुमा रसोई प्रतीत होती है। इसमें दो-तीन तहखाने भी हैं। जिन्हें अब सफाई के बाद दरवाजे लगाकर बंद कर दिया गया है। दिलचस्प पहलू यह है कि प्रथम तल पर कहीं कोई खिड़की नजर नहीं आती, जबकि पहले इसके आगे व पीछे आँगन भी होते थे।

ऐसा संभवतया सुरक्षा पक्ष को लेकर किया गया होगा। इस 30 फुटी हवेली का प्रथम तल करीब नौ सौ से एक हजार वर्ष पुराना बताया जाता है। इस ऐतिहासिक हवेली का द्वितीय तल खास किस्म की ईंटों से बना है, जिन्हें लखौरी ईंटें कहा जाता है। 5 इंच लंबी, साढ़े तीन इंच चौड़ी तथा डेढ़ इंच मोटी ईंटों की कलात्मक चिनाई में पुर्तगाली शैली के प्रमाण मौजूद हैं।

यह जीर्णोद्धार कार्य 1540 ई. का है। इस तल पर बने 2 वर्गाकार सभागार ध्यान खींचते हैं; जिनमें से एक की छत गिर चुकी तथा दूसरा हाल आज भी ठीक स्थिति में है। सबसे ऊपर का तल खुला है, किंतु इसकी चहारदीवारी 7-8 फुटी सुरक्षा कवच जैसी प्रतीत होती है।

सोलहवीं शताब्दी के महानतम हिंदू योद्धा कहे जाने वाले हेमू के पिता लाला पूर्णमल सन् 1516 में राजस्थान के मछेरी गाँव (अलवर) से रेवाड़ी आकर कुतुबपुर मुहल्ले में रहने लगे थे। उस समय हेमू की उम्र 15 वर्ष की थी।

शोरे व खाद्य सामग्री से जुड़े व्यापार के साथ अपनी विलक्षण प्रतिभा के चलते हेमू का माप-तोल अधिकारी, दरोगा-ए-चौकी, सेना अधिकारी से सेनापति होते हुए प्रधानमंत्री तक पहुँचने की ऐतिहासिक यात्रा से कुतुबपुर व रेवाड़ी जुड़ा रहा है।

इस हवेली को उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व से जुड़े संग्रहालय का रूप देने के लिए ही अनेकों भारतप्रेमी प्रयत्नरत हैं। अब देखना यह है कि यह ऐतिहासिक हवेली राष्ट्रीय मानचित्र पर अपना स्थान कब बनाती है? ❑

धर्म और मनोविज्ञान का समन्वय

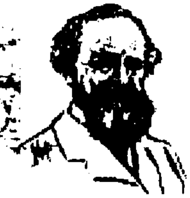

धर्म का मनोविज्ञान से गहरा संबंध है। मनोविज्ञान धर्म की बातों का कहाँ तक समर्थन करता है और उन्हें मानव जीवन के लिए कहाँ तक हितकर बताता है—इन सब बातों के पूर्व यह जानना आवश्यक है कि धर्म शब्द का अर्थ क्या है?

हितोपदेश, मनुस्मृति और भगवद्गीता में 'धर्म' शब्द कर्त्तव्य का बोधक है। आज धर्म और राजनीति एकदूसरे में इतने मिश्रित हो गए हैं कि यह जानना कठिन हो गया है कि राजनीति धर्म से चल रही है या धर्म राजनीति से। इस समय विभिन्न धर्मावलंबी लोग अपने-अपने धर्मप्रचार के लिए अपनी-अपनी पद्धति के अनुसार धर्म का प्रचार कर रहे हैं।

कुछ लोग पद, नाम, कीर्ति कमाने में ही अपने अमूल्य जीवन को बिता रहे हैं और कुछ लोग समाज सुधार या समाज कल्याण के कार्यों में लगे हुए हैं, किंतु मान, बड़ाई और प्रतिष्ठा की कामना एवं स्वार्थपरता का परित्याग कर समाज कल्याण के लिए कितने लोग काम कर रहे हैं? सर्वोत्तम धर्म तो वह है, जो हमें परमानंद की प्राप्ति कराए। ऐसे ही धर्म का उपदेश गीता में हमें मिलता है—

अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः।
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम्॥

—*गीता 16/1*

श्रीभगवान बोले—"भय का सदा अभाव, अंत:करण की शुद्धि, ज्ञान के लिए योग में दृढ़ स्थिति, सात्त्विक दान, इंद्रियों का दमन, यज्ञ, स्वाध्याय, कर्त्तव्यपालन के लिए कष्ट सहना, शरीर, मन, वाणी की सरलता।

अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शांतिरपैशुनम्।
दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम्॥

—*16/2*

"अहिंसा, सत्यभाषण, क्रोध न करना, संसार की कामना का त्याग, अंत:करण में राग-द्वेषजनित हलचल का न होना, चुगली न करना, प्राणियों पर दया करना, सांसारिक विषयों में न ललचाना, अंत:करण की कोमलता, अकर्त्तव्य करने में लज्जा, चपलता का अभाव।

तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता।
भवन्ति सम्पदं दैवीमभिजातस्य भारत॥

—*16/3*

"तेज (प्रभाव), क्षमा, धैर्य, शरीर की शुद्धि, बैर-भाव का न रहना और मान को न चाहना, हे भरतवंशी अर्जुन! ये सभी दैवी संपदा को प्राप्त हुए मनुष्य के लक्षण हैं। श्रीमद्भगवद्गीता के अनुसार ये ही धर्म के सर्वोत्तम लक्षण हैं। गीता में धर्म शब्द मानव कर्त्तव्य का बोधक है, निष्काम कर्मयोग योग का प्रतीक है। यदि संसार से कर्म और कर्त्तव्य का भाव उठ जाए तो मानव समाज का जीवित रहना ही संभव नहीं है।"

धर्म के इस अर्थ में केवल यही प्रश्न मनोविज्ञान में उठ सकता है कि मनुष्य की कर्त्तव्य बुद्धि उसके भीतरी जन्मजात स्वभाव का अंग है या बाहर से आरोपित की गई है। क्या मनुष्य की शिक्षा—ज्ञान, उसकी कर्त्तव्यबुद्धि को प्रस्फुटित करती है या वह उसका निर्माण ही करती है। यदि मानव में कर्त्तव्य के भाव न हों तो वह सुखी रहेगा या दु:खी। इन प्रश्नों के उत्तर मनोवैज्ञानिकों ने विभिन्न प्रकार से दिए हैं।

▶'नारी सशक्तीकरण' वर्ष◀

इन पर विचार करने से पूर्व हमें धर्म के दूसरे अर्थ पर भी विचार करना होगा। 'पुरुषार्थ' धर्म का दूसरा अर्थ है। यह चार पुरुषार्थों में से एक है। मनुष्य स्वभाव की पूर्णता चारों पुरुषार्थों की प्राप्ति से ही होती है। अर्थ और काम व्यक्तिगत जीवन के पुरुषार्थ हैं और धर्म सामाजिक जीवन का पुरुषार्थ है।

जो व्यक्ति दूसरों की सेवा में अपने आप को समर्पित नहीं करता, वह समाज में सम्मान नहीं पाता। केवल मनुष्य में ही यह शक्ति है कि वह दूसरे के हितों को ही अपने हित के समान माने और उनकी पूर्ति के लिए सदा प्रयत्नशील रहे, तभी वह सम्मान का भागी रहेगा और उसे सामाजिक सुरक्षा प्राप्त होगी।

कई मनोवैज्ञानिकों ने धर्म की अलग-अलग व्याख्या की है। विलियम जेम्स ने कहा है कि 'धर्म मनुष्य की भावनात्मक आवश्यकता है', ईश्वर है या नहीं, परंतु ईश्वर का विचार ही केवल मनुष्य को सुरक्षा की अनुभूति कराता है। इससे वह अपने जीवन के कार्यों को पूरी निष्ठा से करता है और शांति से मर जाता है।

सिगमंड फ्रायड ने 'फ्यूचर ऑफ एन इल्यूजन' नामक पुस्तक में कहा है कि 'मजहब एक प्रकार का पागलपन है, जिसका अंत विज्ञान के आलोक की वृद्धि से अनायास ही हो जाएगा।' टेन्सले ने धार्मिक देवी-देवताओं को अचेतन मन की प्रक्षेपण (प्रोजेक्शन) क्रिया का परिणाम कहा है।

उनका कथन है कि यह बात उतनी सही नहीं है कि ईश्वर ने मनुष्य को बनाया, जितनी यह बात सही है कि मनुष्य ने ईश्वर को बनाया है, परंतु देवी-देवता आदि के निर्माण की क्रिया का ज्ञान मानव को नहीं रहता; क्योंकि यह उसके अचेतन मन का कार्य है न कि उसके चेतन मन का। जब किसी व्यक्ति को उसकी अपनी इस अचेतन क्रिया का ज्ञान हो जाता है तब वह क्रिया ही नष्ट हो जाती है।

संत कबीर भी अपने समय के महान संत और मनोवैज्ञानिक रहे हैं। उन्होंने भी अचेतन मन की क्रिया को जानकर एक जगह कहा है-

अवधू छाड़हु मन विस्तारा।
सो पद गहहू जाहि ते सद्‌गति
पारब्रह्म ते न्यारा न।
कुछु महादेव, नहीं मोहम्मद,
हरि हिजरत कछु नाहीं।

धर्म में बताए गए भूत-प्रेत-पिशाच, देवी-देवता, शैतान आदि तत्त्व भौतिक विज्ञान की खोज के विषय नहीं हैं। यह मानव की अनुभूतियों के रूप में सत्य हैं और ये सभी तथ्य मनुष्य के अचेतन मन में हैं। कोई भी मनुष्य इनकी प्रस्तुति करता है, उसका स्वरूप एक आदर्श लिए हुए रहता है।

मानसिक चिकित्सा के प्रयोगों में देखा जाता है कि जिन लोगों की धार्मिक भावनाएँ प्रबल होती हैं, उन्हें बहुत जल्दी मानसिक रोगों से मुक्त किया जा सकता है। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक चिकित्सक चार्ल्स युंग का कहना है कि जिन लोगों की धार्मिक भावनाएँ सुदृढ़ रहती हैं, उन्हें मानसिक रोग नहीं होते हैं।

किसी भी रोगी का मानसिक रोग तब तक पूरी तरह नहीं जाता, जब तक वह एक ठोस जीवन दर्शन प्राप्त नहीं कर लेता। उनका यह भी कहना है कि संसार के सभी मानसिक चिकित्सक मिलकर जितने मानसिक रोगों की चिकित्सा कर पाते हैं, उससे अधिक चिकित्सा संसार के छोटे-से-छोटे धर्म द्वारा ही हो जाती है।

धर्म मनुष्य के भावनात्मक विकास का साधन है; जिसका कोई सहारा नहीं है, वह धर्म के आधार पर जी लेता है। धार्मिक साधनाएँ, मूर्तिपूजा और

यज्ञ आदि तक ही सीमित नहीं हैं। इनकी अपने-अपने स्थान पर मनोवैज्ञानिक उपयोगिता है, परंतु इनकी पूर्ति मन पर विजय प्राप्त करने पर होती है और मन पर विजय धार्मिक जीवन की पराकाष्ठा है।

भौतिक दृष्टि पर आधारित मनोविज्ञान अधूरा ही है। यह बहिर्मुखी चिंतन पर आधारित है। संपूर्ण मनोविज्ञान के लिए अंतर्मुखी चिंतन अनिवार्य है। संसार के धर्म इसी प्रकार के चिंतन के परिणाम हैं। चिंतन, चरित्र और व्यवहार के आधार पर धर्म और मनोविज्ञान को जोड़ा जा सकता है। मनोविज्ञान व्यवहार एवं चिंतन को प्रश्रय देता है और धर्म चरित्र पर बल देता है। इन तीनों में समन्वय से ही संपूर्ण व्यक्तित्व का निर्माण होता है, जहाँ धर्म और मनोविज्ञान स्वतः ही मिल जाते हैं। ❑

पं. चिदंबर दीक्षित की ख्याति कर्नाटक के सुप्रसिद्ध चमत्कारी संत के रूप में थी। देश-विदेश से अनेकानेक व्यक्ति उनके पास आशीर्वाद की चाह लेकर के आया करते थे।

एक दिन एक महिला उनसे माँ बनने का आशीर्वाद लेने पहुँची। उसने दीक्षित जी से उल्लेख किया कि वो अनेक संतों की शरण में जा चुकी है और तमाम व्रत-उपवास कर चुकी है, पर उसकी मनोकामना आज तक पूर्ण नहीं हुई।

दीक्षित जी ने उसे दो-तीन मुट्‌ठी चने देकर एक कोने में बैठने को कहा। कुछ देर पश्चात दीक्षित जी ने देखा कि सड़क पर खेलते हुए बच्चों ने उस महिला से कुछ चने माँगे, पर महिला ने उनकी याचना का उत्तर देने के बजाय दूसरी ओर मुँह कर लिया। बेचारे बच्चे कातर भाव से उसकी ओर ताकते रहे।

यह दृश्य देखकर दीक्षित जी महिला से बोले—"तुम मुफ्त में मिले चनों को बाँटने में निष्ठुरता दिखाती हो तो भगवान से यह कैसे आशा करती हो कि वो अपनी एक प्यारी आत्मा तुम्हारे घर भेज देंगे। पहले अपने ममत्व और करुणा का विस्तार करो। जब सही पात्रता तुम्हारे अंदर विकसित हो जाएगी तो परमात्मा का अनुग्रह भी तुम्हारे पीछे दौड़ा चला आएगा।" उस महिला की आँखें खुल गईं और उसने अपना जीवन परिमार्जित करने का वचन दीक्षित जी को दिया।

संपूर्ण स्वास्थ्य का लाभ

स्वस्थ शरीर एवं प्रसन्न मन से ही जीवन की सार्थकता है। धन से सुखी होने के लिए इनसान काम करता है चाहे नौकरी करे या निजी व्यवसाय। मन से सुखी होने के लिए उसमें सहनशीलता, दया, सहिष्णुता के साथ-साथ क्रोध, ईर्ष्या, नफरत, बदले की भावना इत्यादि पर काबू पाना जरूरी है; जिन्हें मानव धर्म के लक्षण माना गया है। इसी के कारण इनसान पशु से भिन्न होता है। आहार, निद्रा, भय और मैथुन की आवश्यकता तो पशु में भी पाई जाती हैं—

आहार निद्रा भय मैथुनानि,
सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणाम्।
धर्मो हि तेषां अधिको विशेषो,
धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः॥
धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीः विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्॥

अतः मानसिक सुख मिलता है—आत्मसंयम से, योग से, प्राणायाम से, वेदों के ज्ञान से व धर्म का पालन करने से। यह आज के युग में थोड़ा कठिन है, पर हम कोशिश करके पा सकते हैं। सबसे ज्यादा जरूरी व आसान है तन से सुखी रहना; क्योंकि यह इनसान के स्वयं के हाथ में है व कुछ सावधानियों से ही तन को स्वस्थ रखा जा सकता है व बीमारियों को आने से रोका जा सकता है।

ये सावधानियाँ मुश्किल नहीं हैं, इसके लिए सिर्फ अपने रोजमर्रा के जीवन में कुछ बदलाव की जरूरत है। यह बदलाव किया जा सकता है। खान-पान व रहन-सहन में बदलाव या परिवर्तन करना अनिवार्य है।

शरीर स्वस्थ रहता है तो मन भी स्वस्थ रहता है और मन स्वस्थ रहता है तो परिवार सुखी रहता है। जब बीमारियाँ आएँगी ही नहीं तो बीमारियों पर होने वाले खरचे में कमी आएगी, जिससे देश की अर्थव्यवस्था में स्वयं सुधार आ सकता है। यह जानना जरूरी है कि शरीर को स्वस्थ रखने के लिए क्या-क्या करना चाहिए? सुबह जागने से, रात सोने तक, यानी पूरे दिन की दिनचर्या में क्या बदलाव लाने चाहिए—

1. सुबह सूरज उगने से पहले उठकर घूमने अवश्य जाना चाहिए। सूरज उगने से पहले शुद्ध व शीतल वायु के प्रवेश से शरीर में ताजगी व स्फूर्ति आती है एवं सारा दिन मन प्रसन्न रहता है।

2. सुबह रोज सोकर उठने के बाद शौच के बाद दाँत मंजन, पेस्ट, ब्रश या नीम की दातुन से जरूर साफ करने चाहिए। पूरी रात की गंदगी दाँतों व मसूड़ों पर जमा रहती है, अगर उन्हें साफ नहीं करेंगे तो उनमें कीटाणु पनपते हैं व जड़ें कमजोर हो जाती हैं। रात को सोने से पहले भी दाँत साफ कर लेना चाहिए।

3. शौच के बाद साबुन या साफ मिट्टी से हाथ अवश्य धोने चाहिए। अन्यथा हाथों की गंदगी खाना खाते समय मुँह व पेट में जाती है व तरह-तरह के रोगों को जन्म देती है, जैसे उलटी, दस्त, पीलिया, टायफॉयड, पेट में कीड़े इत्यादि।

4. रोज सुबह शौच व दंतमंजन के बाद स्नान जरूर करना चाहिए, ताकि शरीर स्वच्छ व स्वस्थ रहे। वैसे भी बिना स्नान स्फूर्ति व ताजगी नहीं आती है, गरमी-सरदी व बरसात हर मौसम में नहाना चाहिए।

5. नहाने के बाद रोज करीब आधा घंटा के लिए योगासन व प्राणायाम करना चाहिए। योग से

अनेक शारीरिक व मानसिक बीमारियों से बचाव होता है व शरीर स्वस्थ रहता है।

6. जीवन में हँसना सेहत के लिए बहुत जरूरी है। सकारात्मक विचारों से भी तन-मन स्वस्थ रहते हैं।

7. खाने-पीने में बदलावों से पहले, पहनने इत्यादि के बारे में कुछ बातें जरूरी हैं। फैशन के चक्कर में कुछ लोग बहुत चुस्त व बे-ढंगे कपड़े पहन लेते हैं, जिन्हें देखने में तो बुरा लगता ही है साथ ही चुस्त कपड़ों के त्वचा पर रगड़ लगते रहने से त्वचा का रोग होने का डर रहता है। अत: शरीर पर सही लगने वाले ढीले परिधान पहनने चाहिए। खान-पान में बदलाव शरीर व मन, दोनों के स्वस्थ रहने के लिए बहुत जरूरी है।

कहावत है 'जैसा खाए अन्न, वैसा होवे मन।' सुबह हलका नाश्ता, दोपहर व रात को सही समय पर भोजन करना चाहिए। सुबह 9 बजे तक नाश्ता, 2 बजे तक दोपहर का भोजन व रात 8 बजे तक रात का भोजन कर लेना चाहिए। दो समय के भोजन के बीच में खाना पचने का सही समय होना चाहिए। खाने में भारतीय परंपरा व संस्कृति के आधार पर दाल, चावल, रोटी, सब्जी, सलाद, दही व फलों का सेवन करना चाहिए।

आधुनिक विज्ञान के आधार पर कार्बोहाइड्रेट, वसा, प्रोटीन, मिनरल व विटामिनयुक्त संतुलित आहार मिल जाता है। हमें अलग से विटामिन की गोलियाँ लेने की जरूरत ही नहीं रहती है। सुबह नाश्ते में व रात को सोने से पहले दूध का सेवन उन्हें अवश्य करना चाहिए, जिन्हें कैल्सियम की ज्यादा जरूरत होती है। इससे हड्डियाँ मजबूत रहती हैं। कच्ची सब्जियाँ, सलाद व फलों में मिनरल व विटामिन प्रचुर मात्रा में होते हैं। खाने से पहले अच्छी तरह धो अवश्य लेने चाहिए।

मांसाहार नहीं करना चाहिए, सिर्फ शाकाहार करना चाहिए; क्योंकि मांसाहार शरीर के लिए बहुत नुकसानदायक होता है। अब वैज्ञानिक प्रयोगों से भी सिद्ध हो गया है कि शाकाहार पौष्टिक तथा लाभदायक भी है। मांसाहार से हृदय रोग, लकवा, फालिस, मधुमेह, उच्च रक्तचाप एवं विभिन्न प्रकार के कैंसर व पथरियों सहित अनेक बीमारियाँ हो सकती हैं। अत: शाकाहार करना चाहिए।

भारतीय पारंपरिक शरबत, लस्सी, शिकंजी जैसे पेयजलों का प्रयोग करना चाहिए। पेप्सी, कोला जैसे पेयजलों से परहेज करना चाहिए। वैज्ञानिक प्रयोगों से सिद्ध हो गया है कि पेप्सी, कोला में इतना अधिक एसिड या तेजाब होता है जो हड्डी व दाँतों को गला देता है। इससे पेट या आँतों की झिल्ली भी प्रभावित होते हैं। इनका अधिक सेवन करने से पेट व आँतों की एसिडिटी, अल्सर व कैंसर जैसी बीमारियाँ हो सकती हैं। दाँत व हड्डियाँ कमजोर हो जाते हैं।

इन पेयजलों में पाए जाने वाले कीटनाशकों व सुरक्षित रखने वाले रसायनों से विभिन्न प्रकार के कैंसर हो सकते हैं। आटे की रोटियाँ खासतौर से ज्यादा चोकर वाले मोटे आटे की रोटियाँ खाना चाहिए। मैदे का सेवन कम करना चाहिए। यह देखा गया है कि कम चोकर वाले आटे के खाने से बड़ी आँत की बीमारी व बवासीर का खतरा बढ़ जाता है।

पिज्जा, बर्गर, नूडल्स (चाउमीन) जैसे भोज्य पदार्थ मैदा के बने होते हैं। इनमें वसा भी अत्यधिक मात्रा में होती है; इससे मोटापा, डायबिटीज, उच्च रक्तचाप जैसी बीमारियाँ बढ़ती हैं। शराब व सिगरेट, तंबाकू-गुटका व पान-मसाले का सेवन नहीं करना चाहिए। ये सभी दुर्व्यसन सेहत के लिए ही नुकसानदायक नहीं हैं, बल्कि ये मन व धन के लिए भी नुकसानदायक होते हैं। इससे शरीर तो खराब होता ही है, पैसे की तंगी भी आती है।

इसका असर पूरे परिवार पर पड़ता है। घर में कलह होती है, लड़ाई-झगड़े होते रहते हैं। मन की

शांति भंग होती है। तन में अनेक रोग, जैसे फेफड़े व जिगर का कैंसर, मुँह व आमाशय का कैंसर, उच्च रक्तचाप, हृदय रोग, फालिस, लकवा, पैरों का गेंग्रीन व गुरदे की बीमारियाँ भी होती हैं।

तन व मन को स्वस्थ रखने के लिए अपने घर व घर के आस-पास की स्वच्छता का ध्यान रखना चाहिए; क्योंकि गंदगी में मक्खी, मच्छर व अन्य कीड़े पनपते हैं। इससे मलेरिया, टायफॉयड, पीलिया, जैसी बीमारियाँ हो सकती हैं। आस-पास पेड़-पौधे उंगाकर पर्यावरण शुद्ध रखना चाहिए। पेड़-पौधे अपना भोजन बनाने के लिए गंदी हवा कार्बन-डाइऑक्साइड को अंदर ले लेते हैं व शुद्ध वायु ऑक्सीजन छोड़ते हैं। यह जीव-जंतुओं के लिए लाभदायक व आवश्यक होती है।

शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक स्वास्थ्य के लिए खान-पान, रहन-सहन के साथ स्वाध्याय एवं सत्संग की भी आवश्यकता है।

सात्त्विक भोजन से शरीर स्वस्थ होता है, स्वाध्याय से मन प्रसन्न रहता है एवं प्रार्थना से आत्मिक शांति मिलती है। इन सबका समुचित पालन करने से शरीर व मन सदा स्वस्थ बने रहते हैं। ❑

कुछ बालक छत पर बैठे चर्चा कर रहे थे। एक के मन में प्रश्न उभरा कि यदि अभी कोई संकट हम सबके समक्ष खड़ा हो जाए तो सबसे पहले नीचे कौन पहुँचेगा?

एक ने उत्तर दिया कि मैं तेजी से सीढ़ियाँ उतरते हुए पहुँच जाऊँगा।

दूसरे ने कहा कि मैं रस्सी का सहारा लेकर जल्दी पहुँचूँगा।

तभी एक बालक उठा, उसने अपनी धोती कसी और 'मैं तो ऐसा करूँगा' कहते हुए नीचे छलाँग लगा दी। यह देखकर उसके साथी चिल्लाए और नीचे को दौड़े।

नीचे वह बालक सुरक्षित खड़ा मुस्करा रहा था। सबके पास आने पर वह बोला—"भला बातें बनाने में क्या साहस, असली शौर्य तो काम कर दिखाने में है।"

उस साहसी बालक का नाम गंगाधर था और वही आगे चलकर बाल गंगाधर तिलक के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

हिम मानव का रहस्य

विश्व की पौराणिक कथाओं में विचित्र महाकाय जीव-जंतुओं का वर्णन पाया जाता है। इनके घटनाक्रम में रहस्य एवं रोमांच का संचार होता है। महाभारत एवं रामायणकालीन कथाओं में रावण, कुंभकरण, हनुमान, घटोत्कच्छ, हिडंबा आदि के वृत्तांत अत्यंत रहस्यपूर्ण हैं एवं विपुल शक्ति के योद्धा होने के कारण इन्हें अतिमानवीय शक्ति के उदाहरण के रूप में भी जाना जाता है।

ये विश्वप्रसिद्ध पात्र वास्तविक थे या काल्पनिक—यह अभी भी वैज्ञानिकों के शोध के विषय बने हुए हैं। मानवीय जिज्ञासा सदा से इनके रहस्यों की खोज-बीन में लगी हुई है। इसी शृंखला में हिमालय के दुर्गम एवं विश्व के अन्य बरफानी क्षेत्रों में हिम मानव एक रहस्यमय प्राणी के नाम से जाना जाता है।

यदि महाकाय इनसान होते थे तो क्या हिम मानव इसी प्रजाति का भयंकर प्राणी है, यह एक ज्वलंत प्रश्न है। हिमालय के अतिरिक्त विश्व के कई दुर्गम एवं बरफीली पहाड़ी वाले क्षेत्रों में हिम मानव के पदचिह्नों की खोज की गई। हिमालय के निकटवर्ती क्षेत्र के निवासी इसे 'यति' के नाम से भी पुकारते हैं। विश्व के अन्य भागों में भी इसके पाए जाने के तथ्य प्राप्त हुए हैं।

इतिहासकारों एवं वैज्ञानिकों ने इनके विशालकाय पदचिह्नों को देखकर इन्हें मानव विकास की लुप्त कड़ियाँ मानकर इनके संदर्भ में हर प्रकार की खोज जारी रखी। इस प्रकार हिम मानव के रहस्य की खोज-कथा और रोचक हो जाती है। विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में इसके रहस्य की खोजों का अलग-अलग विवरण पाया जाता है। आधुनिक विश्व में हिम मानव की सर्वप्रथम खोज सन् 1855 की मानी जाती है।

इस दिन इंग्लैंड के हेवनशायर शहर में सुबह एक ऐसी घटना घटी, जिसे जिसने भी देखा-सुना आश्चर्यचकित रह गया। कहा जाता है कि इस सुबह एक डबल रोटी सेंकने वाला अपनी दुकान के पास खड़ा था, उसने वहाँ भारी आकार में एक अद्‌भुत प्रकार के पाँवों के निशान देखे, जो बरफ पर पड़े मिले। पाँवों के निशान एक ही पंक्ति में थे और उसकी दुकान के दरवाजे से ईंट की दीवार से होकर छत पर पड़े थे, ये निशान घोड़े के पाँव के समान एक दीर्घ आकृति की तरह थे।

लोगों ने इन विचित्र निशानों में पाया कि पाँव के निशान जहाँ पर पड़े थे, वहाँ की बरफ स्पष्ट धँस गई थी, लेकिन पैर के निशान स्पष्ट थे। वे पाँव किस जानवर के थे कहा नहीं जा सकता, परंतु जानकारों का मानना है कि ये पदचिह्न हिम मानव के हो सकते हैं। इस रहस्यमय घटना का विस्तृत विवरण उन दिनों लंदन के समाचारपत्रों में विस्तार से प्रकाशित किया गया था।

इस प्रकार कुछ दिनों बाद पोलैंड के एक डॉक्टर ने ठीक ऐसे ही विशाल पाँवों के निशान हाइडलबर्ग में ग्लेशिया सीमा के पास देखे थे, जो प्रायः वहाँ के हिमाच्छादित प्रदेशों में टहलता-घूमता था। इस प्रकार के रहस्यमय पदचिह्नों की घटनाओं का वैज्ञानिकों ने गंभीरता से अध्ययन प्रारंभ कर दिया। इनमें न्यूजीलैंड के प्रोफेसर रिचर्ड आवेन का नाम विशेष रूप से लिया जाता है, इन्होंने अपने अध्ययन में यह पाया कि ये पैर के निशान हिम मानव के हैं।

इस प्रकार के हिम मानव अथवा यति के पैरों के निशान सन् 1953-54 में इंग्लैंड के कुछ क्षेत्रों में भी पाए गए। इसी प्रकार कनाडा, अमेरिका व साइबेरिया के क्षेत्र में इन्हें बिगफुट, सेक्यूएच याली आदि नामों से पुकारा जाता है।

हिम मानव के विषय में कहा जाता है कि इसका कद दस फीट से ऊँचा था तथा उसका शरीर लाल रंग के बालों से आच्छादित था, जिससे इसका आकार विशाल एवं भयंकर था। इसे सर्वप्रथम सन् 1832 में एक नेपाली व्यापारी ने नेपाल-तिब्बत मार्ग पर देखा था।

हिम मानव के अस्तित्व एवं देखने के प्रमाण सन् 1872 में पर्वतारोही पुडराक, सन् 1877 में नार्वे के एक पर्वतारोही एवं सन् 1889 में कर्नल वेडाले ने भी दिए और पदचिह्नों का प्रमाण प्रस्तुत किया।

नेपाली शेरपाओं द्वारा हिम मानव के अस्तित्व की कथाएँ कही जाती हैं। वे इस दैत्याकार प्राणी के संबंधों में कई रहस्यों के जानने का दावा भी करते हैं।

हिम मानव के प्रामाणिक लेखन की जानकारी सर्वप्रथम सन् 1944 में वुड फिनलैंड और मैक के लिखित दस्तावेजों से प्राप्त होती है। उन्होंने 4,000 मीटर की ऊँचाई पर हिमालय में दो पैरों से चलने वाले एक बड़े बालों वाले विचित्र जानवर को देखा था।

इस संबंध में रोचक जानकारी देते हुए सन् 1948 में नार्वे के प्रास्टिस और यारवर्ग लिखते हैं कि उन्होंने हिमालय में भ्रमण करते हुए इसी प्रकार के एक यति का अनुसरण किया और अंत में दो विशाल हिम मानवों से भिड़ गए। इसमें संघर्षरत प्रास्टिस को चार बार हवाई फायर कर छुड़ाया गया।

हिम मानव की प्रासंगिकता के संदर्भ में यह महत्त्वपूर्ण जानकारी मानी जाती है। इन पत्रकारों के अतिरिक्त अन्य लोगों द्वारा भी हिम मानव के प्रमाण जुटाने के प्रयास किए गए। सन् 1951 में एरिक शिंफ्राटन ने प्रमाण जुटाने के लिए प्राप्त पदचिह्नों के फोटो प्रदर्शित किए। इसने इस दिशा में खोज एवं अनुसंधान करने वालों को आकर्षित किया।

इस प्रदर्शन के दो वर्ष पश्चात सन् 1953 में सर जॉन इट के नेतृत्व में एक दल एवरेस्ट अभियान के लिए निकला। इस दल के प्रमुख सदस्य विलाफिड बोडस ने उसको एवं उसके पदचिह्नों को देखने का दावा किया। इतना ही नहीं, इन्होंने इसकी आवाज सुनने की भी बात कही। उन्होंने बताया कि एक विशालकाय जानवर दो आदमी और बंदर के समान था, उनके शिविर के पास आया तथा रहस्यमय आवाज निकालते हुए अदृश्य हो गया।

इसके अतिरिक्त हिमालय पर्वत पर पर्वतारोहियों ने भी हिम मानव को प्रत्यक्ष देखने का दावा किया है। एवरेस्ट पर चढ़ने वाले प्रथम पर्वतारोही शेरपा तेनजिंग एवं एडमंड हिलेरी ने भी इसके अस्तित्व की बात स्वीकार की है।

हिम मानव या यति की ऊँचाई लगभग दो मीटर होती है। इसका शरीर बालों से ढका रहता है तथा इसकी आँखें अंदर की ओर छोटी-छोटी होती हैं। इसका वजन लगभग 200 किलोग्राम तक हो सकता है। यद्यपि हिम मानव के बारे में अलग-अलग विवरण प्राप्त होता है, लेकिन इसके रोचक तथ्यों का विवरण ग्रीक्स एंड दि कूर्टक्सल में ईआर जेडस ने विस्तार से किया है।

इसके अलावा पैट्रिक हार्वर की 'मोमीनिक रियेल्टी कोलीन' और बोर्ड जोनट की 'बिगफुट केप: एलाइव एनीमल' तथा प्रोफेसर लियोन्टल की पुस्तक 'एफेलॉजी फॉर दि फेल्लिस ऑफ रोमर एंड दि डिफेक्टिव आरेकुलम' आदि में भी पाया जाता है।

इन ग्रंथों में इस बात पर जोर दिया गया है कि हिम मानव कपोल कल्पना मात्र न होकर एक

हकीकत है। हिम मानव संबंधी प्रामाणिक जानकारियाँ देने में बनार्ड होवेसमेंस की प्रसिद्ध पुस्तक 'ऑन दि टेक ऑफ अननॉन एनिमल्स' अधिक विश्वसनीय मानी जाती है। इसके अनुसार हिम मानवों की यति, शिमि एवं न्यायालामा तीन प्रकार की प्रजातियाँ हैं, इनमें यति की ऊँचाई 5 मीटर या इससे भी अधिक होती है। इसका पूरा शरीर बड़े-बड़े बालों से ढका रहता है। इसी प्रकार शिमि प्रजाति के हिम मानव की ऊँचाई 3 मीटर होती है, जो हिमालय के चार सौ मीटर ऊँचाई वाले हिस्सों में पाई जाती है। तीसरे प्रकार की प्रजाति न्यायालामा है।

ये हिमालय के 4,000 मीटर से अधिक ऊँचाई वाले हिस्सों में पाए गए हैं। ये श्वेत रंग के होते हैं। हिम मानव के संबंध में आज भी कई प्रकार की कथाएँ प्रचलित हैं व वैज्ञानिक इनके रहस्यों को जानने में लगे हुए हैं। प्रकृति रहस्यों से भरी हुई है, इसे नकारा नहीं जा सकता। ❑

मगध के एक व्यापारी को व्यापार में बहुत लाभ हुआ। उससे वह इतना मदांध हो गया कि अपने अधीनस्थ व्यक्तियों के साथ अहंकारपूर्ण व्यवहार करने लगा। उसकी देखा-देखी उसके परिवार के अन्य सदस्य भी अहंकारी हो गए। जब सबके अहंकार परस्पर टकराने लगे तो घर का वातावरण नारकीय हो गया।

दुःखी होकर एक दिन वह व्यापारी भगवान बुद्ध के पास पहुँचा और बोला—"भगवन्! मुझे इस नरक से मुक्ति दिलाइए। मैं भी भिक्षु बनना चाहता हूँ।"

भगवान बुद्ध गंभीर स्वर में बोले—"भंते! अभी तुम्हारे भिक्षु बनने का समय नहीं आया। भिक्षु को पलायनवादी नहीं होना चाहिए। जैसे व्यवहार की अपेक्षा तुम दूसरों से करते हो, स्वयं भी दूसरों के प्रति वैसा ही व्यवहार करो। ऐसा करने से तुम्हारा घर ही मंदिर बन जाएगा।"

उस व्यापारी ने भगवान बुद्ध की सीख को अपनाया और अपनाते ही घर का वातावरण स्वतः बदल गया। सत्य ही है कि दूसरों के साथ वह व्यवहार न करो, जो तुम्हें अपने लिए पसंद नहीं।

इच्छाशक्ति को कुछ ऐसे बढ़ाएँ

इच्छाशक्ति मनुष्य की एक मौलिक विशेषता है, जिसके बल पर वह स्वयं पर नियंत्रण स्थापित करता है और किसी भी कठिन कार्य को अंजाम दे सकता है। इसी के बल पर वह अल्पकालिक आकर्षणों पर नियंत्रण स्थापित करते हुए अपने दीर्घकालिक लक्ष्य को प्राप्त करता है। अतः इसे दृढ़ संकल्प या आत्मनियंत्रण भी कहा जा सकता है, जिसके अंतर्गत व्यक्ति अपने विचार, भाव एवं व्यवहार को साधता है और अपने उच्चतर ध्येय को प्राप्त करने के लिए शारीरिक आलस्य, विलासिता एवं मानसिक प्रमाद तथा भोगवृत्ति को त्यागने का साहस कर पाता है।

इच्छाशक्ति के लाभ अनगिनत हैं। यह इंद्रियों व मन के बिखराव को रोककर व्यक्ति की एकाग्रता की शक्ति को बढ़ाता है। छोटी-बड़ी आंतरिक दुर्बलताओं पर विजय पाता है। इच्छाशक्ति के बल पर निस्संदेह रूप में व्यक्ति सन्मार्ग पर चलता है, सच्चिंतन का आश्रय लेता है। इसके साथ आत्मसम्मान का भाव बढ़ा-चढ़ा रहता है, जो क्रमशः आत्मविश्वास को सुदृढ़ करता है।

ऐसे व्यक्ति में तनाव का सामना करने व द्वंद्वों से उबरने की क्षमता अधिक होती है। आपसी संबंध सामंजस्यपूर्ण और टिकाऊ रहते हैं। इच्छाशक्ति व्यक्तित्व को अपने अनुरूप गढ़ती है। सार रूप में इच्छाशक्ति एक सफल, सुखी एवं उत्कृष्ट जीवन का आधार रहती है। इच्छाशक्ति को कैसे विकसित करें—यह एक यक्ष प्रश्न है, जिसके कई आयाम हैं। इसका सबसे महत्त्वपूर्ण पहलू है आत्मानुशासन।

जैसे शारीरिक व्यायाम करने से मांसपेशियाँ विकसित होती हैं, शारीरिक सौष्ठव सुनिश्चित होता है—इसी तरह इच्छाशक्ति के विकास के लिए मानसिक व्यायाम की आवश्यकता रहती है, एक संयमित एवं अनुशासित जीवन जिसका आधार है। अपनी जीवनशैली पर ध्यान देते हुए इच्छाशक्ति को बढ़ाया जा सकता है।

स्वादेंद्रिय की अधिक परवाह न करते हुए पौष्टिक एवं हितकारी आहार का सेवन जहाँ शरीर को स्वस्थ बनाता है, वहीं इच्छाशक्ति को भी सुदृढ़ करता है। इसके साथ उचित श्रम, नित्य व्यायाम, अच्छी नींद इसे पुष्ट करते हैं।

इसके विपरीत स्वादलोलुपता, दिन भर खाने की आदत, फास्ट फूड पर निर्भरता इच्छाशक्ति को कमजोर करते हैं। सार रूप में एक आलसी, विलासी एवं भोगप्रधान जीवन के साथ इच्छाशक्ति के विकास की कल्पना नहीं की जा सकती।

एक दिनचर्या बनाकर समय का नियोजन, इच्छाशक्ति के विकास का दूसरा आधार है। समय पर सोना, समय पर जागना जिसका अभिन्न अंग हैं। प्रातः आत्मबोध के साथ दिन भर के कार्यों का निर्धारण, इनका सांगोपांग निर्वहन, सजग होकर पूरी तत्परता के साथ अनुपालन इच्छाशक्ति को मजबूत करते हैं।

एक सजग, संतुलित दिनचर्या इस संदर्भ में महत्त्वपूर्ण रहती है। इसके विपरीत अस्त-व्यस्त जीवनचर्या एवं मनमौजी आचरण के आधार पर इच्छाशक्ति के विकास की आशा नहीं की जा सकती है। अपने वाणी-व्यवहार में संयम, सहिष्णुता एवं उदारता के अभ्यास इच्छाशक्ति के व्यायाम हैं।

दूसरों के द्वारा उकसाए जाने पर प्रतिक्रिया का अवसर होने पर भी अपने व्यवहार और वाणी

को संयत रखना, सही व सधी बात कहना, अपने आचरण-व्यवहार की गरिमा को बनाए रखना, इच्छाशक्ति को बलवती करते हैं, नैतिक बल को बढ़ाते हैं।

इसके विपरीत छोटी-छोटी बातों पर गुस्सा, अनावश्यक प्रतिक्रिया, प्रतिशोध का भाव एवं बिगड़े बोल कमजोर इच्छाशक्ति के ही लक्षण माने जा सकते हैं, जो व्यक्तित्व को हलका साबित करते हैं और इसके प्रभाव को कम करते हैं।

इच्छाशक्ति के विकास के लिए लक्ष्य का स्पष्ट होना भी आवश्यक है, जिसे हम छोटे-छोटे टुकड़ों में बाँटकर नित्य रूप में हासिल कर सकें। जब हम इसमें प्रगति का मापन कर पाते हैं, तो उत्साह बढ़ता है, इच्छाशक्ति भी उत्तरोतर विकसित होती है।

इसके विपरीत जब लक्ष्य हवा-हवाई, काल्पनिक और अयथार्थवादी होते हैं, तो इनके क्रियान्वयन के अभाव में आशा-उत्साह का संचार नहीं हो पाता, मनोबल टूटने लगता है, इच्छाशक्ति कमजोर पड़ जाती है और मन के अरमान सपनों में ही दम तोड़ते रहते हैं और जीवन निराशा-हताशा के अँधेरे में खोने लगता है। जबकि स्पष्ट लक्ष्य दुर्बल इच्छाशक्ति की इस त्रासदी से उबारता है।

स्वयं के प्रति अत्यधिक कठोरता भी इच्छाशक्ति को कमजोर करती है। मन की ग्रंथियाँ, कुंठाएँ, अपराध-बोध, स्वयं को माफ न कर पाने का भाव मनोबल को तोड़ने वाले साबित होते हैं। अतः स्वयं के यथार्थ को समझें व समग्र रूप में स्वयं को स्वीकारें। जहाँ खड़े हैं, वहीं से आगे बढ़ें।

अपना भी ध्यान रखें व स्वयं के प्रति साहसी दृष्टिकोण व उदार भाव रखें। जहाँ अपना पुरुषार्थ चूक जाता हो, वहाँ दैवी सहायता लेने से न चूकें। साथ ही प्रलोभनों से सावधान रहें। इनको थोड़ा-सा भी प्रश्रय देना आपके दीर्घकालिक श्रम पर पल भर में पानी फेर सकता है और अगर गलती हो जाए तो हतोत्साहित न हों। हर गलती से सीखते हुए दुगने संकल्प के साथ आगे बढ़ें।

छोटी-छोटी उपलब्धियों पर स्वयं को शाबाशी दें, पुरस्कृत करें और इच्छाशक्ति को क्रमिक रूप से सुदृढ़ करते हुए आदतों के सुधार में इसका नियोजन करें तथा मनचाहे व्यक्तित्व को रूपाकार दें। इस प्रक्रिया में आध्यात्मिक अवलंबन बहुत सहायक रहता है।

आध्यात्मिक आदर्श से जुड़ें। स्वाध्याय-सत्संग को जीवन का अभिन्न अंग बनाएँ, जो गहनतम स्तर पर व्यक्तित्व का परिष्कार संभव बनाते हैं और अस्तित्व के परम सत्य से जोड़ते हैं। इसी के साथ इच्छाशक्ति के विकास की असीम संभावनाओं के द्वार भी खुल जाते हैं। ऐसे में ओढ़ी हुई नैतिकता के बजाय आत्मानुशासन का महत्त्व समझ आता है और विवेक के जागरण के साथ इच्छाशक्ति के विकास की कुंजी हाथ लग जाती है।

संक्षेप में जीवन, संतुलन का नाम है, जो सुदृढ़ इच्छाशक्ति के आधार पर संभव होता है। एकतरफा विकास इच्छाशक्ति का प्रतीक नहीं है। मन की इच्छाओं, कामनाओं, महत्त्वाकांक्षाओं के हाथों खिलौना बनकर जीना दुर्बल इच्छाशक्ति के चिह्न हैं; क्योंकि जहाँ मन की शांति, स्थिरता और प्रसन्नता नहीं, वहाँ इच्छाशक्ति एकांगी ही कही जाएगी और जीवन के सर्वांगीण उत्कर्ष का मार्ग भी अधूरा ही माना जाएगा। इच्छाशक्ति का सम्यक विकास ही जीवन की इस त्रासदी से व्यक्ति को उबारता है। ❑

मनुष्य का जीवन दूसरों को दुःख देने के लिए नहीं, उनकी सेवा करने के लिए मिलता है।

मानवीय हृदय की पुकार हैं राग

संगीत मानव के हृदय के उमंग, उत्साह और माधुर्य को प्रदर्शित करता है। भारतीय चिंतन के अनुसार भारतीय सभ्यता व संस्कृति की वाहक कलाएँ हैं। जीवन में सकारात्मक प्रवृत्ति, उल्लास व उत्साह भरने के लिए कलाएँ मनुष्य को सदा प्रेरित करती आई हैं, जिनमें से सबसे उत्कृष्ट ललित कलाओं को माना गया है। इन ललित कलाओं में संगीत का स्थान सबसे श्रेष्ठ है।

संगीत की उत्पत्ति तब से मानी जाती है, जब से मानव ने अपने भावों को अभिव्यक्त करना शुरू किया था। मधुर संगीत का सीधा संबंध मानव मन के सूक्ष्म एवं कोमल संवेगों से है। संगीत में उपस्थित सूक्ष्मध्वनि-तरंगों का मनुष्य की मनोदशा पर अद्भुत प्रभाव पड़ता है।

ध्वनि-तरंगों से मानव शरीर की अंत:स्रावी ग्रंथियाँ सक्रिय होकर हॉर्मोन्स का रिसाव प्रारंभ कर देती हैं। फलस्वरूप वे मानसिक स्थिति को प्रभावित करते हैं। इस प्रकार विभिन्न ध्वनियों के मिश्रण से निर्मित संगीत विभिन्न प्रकारों के भावों का निर्माण कर मानव मन व शरीर पर गहरा असर करता है।

इसी प्रभावोत्पादक परिणाम का प्रयोग जब चिकित्सा रूप में शारीरिक व मानसिक संतुलन को व्यवस्थित रखने के उद्देश्य से किया जाता है, तो इसे संगीत चिकित्सा कहते हैं। कहा गया है—

प्रज्ञापराधं मूलं सर्वरोगाणाम्॥

अर्थात जानकारी के बावजूद गलत कार्य करना, मानसिक अस्त-व्यस्तता, असंतुलित मन:स्थिति, चिंता व अन्य मानसिक विकृतियाँ सभी प्रकार के रोगों का मुख्य कारण हैं।

वेदों में प्रमुख तौर पर सामवेद में रोगों के निवारण के लिए साम गायन विधान मिलता है। विभिन्न पुराणों में शास्त्र ग्रंथों में संगीत को रोगोपचार का मुख्य साधन बताया है। भारतीय संगीत मानसिक शांति व सक्रियता लाने वाली दिव्य औषधि है, जो हमारे तन-मन और भावना में नवजाग्रति भर देती है।

भारतीय संगीत वैदिक है, शाश्वत है, सनातन है और वैज्ञानिक है। आज के कोलाहल भरे, तनावपूर्ण तपन भरे जीवन में संगीत ठंढी फुहारों के मानिंद हैं। संगीत ऐसे ज्योतिपुंज की तरह है, जो हमारे जीवन को आलोकित कर रसमय व मधुमय बना सकता है।

भारतीय संगीत-चिकित्सा का प्रधान वैशिष्ट्य, राग हैं। स्वरों की एक विशेष अवस्था राग कहलाती है। राग का मूल अर्थ 'रँगना' है, अर्थात रंग देने की प्रक्रिया। राग मानव चित्त को अपने रंग में रँग देता है, जिससे मानव मन प्रसन्न हो उठता है।

स्वस्थ रहने के लिए जिस तरह उचित आहार की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार विहार के लिए ऋतु और समय के अनुसार विभिन्न रागों को सुनना लाभप्रद है। स्वर व लय तो विश्व के किसी भी संगीत में मिल सकते हैं, परंतु राग की अवधारणा भारतीय संगीत की अनूठी विशेषता है। प्राचीन भारतीय चिकित्सापद्धति आयुर्वेद पर आधारित है। अत: हमारे महाऋषियों ने संगीत से होने वाले प्रभाव को आयुर्वेदिक आधार पर विश्लेषित किया है।

मधुर संगीत की ध्वनि मनुष्य के स्वास्थ्य की रक्षक, रोग-निवारक व आयुवर्द्धक होती है, यह चिकित्सा उसी पर कारगर है, जो संगीत में रुचि

रखता हो। यह जहाँ शारीरिक लाभ व आरोग्य प्रदान करती है तो वहीं इसका गलत इस्तेमाल नुकसानदायक भी हो सकता है।

रागों से आत्मिक सुख की अनुभूति होती है, जिसके कारण इसे रोग-निवारण में उपयुक्त माना गया है। रागों से चिकित्सा को लेकर कुछ प्रयोग भी हुए हैं। 20वीं सदी में पंडित ओंकारनाथ ठाकुर ने राग पूरिया के चमत्कारिक गायन से इटली के शासक मुसोलिनी को अनिद्रा रोग से मुक्ति दिलाई थी। समुद्रगुप्त की वीणा उपवन में वसंत का एहसास कराती थी।

भारतीय संगीत में कुल 72 राग होते हैं और संगीत के ये 72 राग शरीर की 72 मुख्य नाड़ियों को प्रभावित करते हैं। राग संगीत का मुख्य उपादान स्वर है। स्वर 7 हैं तथा 5 विकृत स्वर भी हैं। अत: शुद्ध व विकृत स्वर मिलकर 12 स्वर बनते हैं। स्वरों के कोमल शुद्ध व विकृत अवस्था के आधार पर ही असंख्य रागों का निर्माण है।

रोगों की प्रकृति के अनुसार ही स्वरों का प्रयोग होता है अर्थात विभिन्न स्वर विभिन्न प्रकार की प्रकृति के रोगों को दूर करते हैं। संगीत के 7 सुरों 'सा, रे, ग, म, प, ध, नि' का शरीर पर विशेष प्रभाव पड़ता है। वेदों में शरीर के सात चक्रों का वर्णन किया गया है, जो मानव शरीर के विभिन्न भागों का संचालन करते हैं। संगीत के 7 सुरों का इन 7 चक्रों पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है।

आयुर्वेद के शरीर रचना विज्ञान के अनुसार सभी बीमारियाँ वात, पित्त व कफ दोषों के कारण होती हैं। इन दोषों के निवारण में राग प्रमुख भूमिका निभाते हैं। ध्वनि के विभिन्न प्रकारों का शरीर में होने वाले त्रिदोषों—वात, पित्त व कफ के साथ आपसी संबंध होता है।

संगीत ऋषि तुंबरू को प्रथम संगीत चिकित्सक माना जाता है। उन्होंने अपनी पुस्तक 'संगीत स्वरामृत' में उल्लेख किया है की ऊँची और असमान ध्वनि का वात पर, गंभीर व स्थिर ध्वनि का पित्त पर तथा कोमल व मृदु ध्वनि का कफ के गुणों पर प्रभाव पड़ता है। यदि संगीत की ध्वनियों द्वारा इन तीनों को संतुलित कर लिया जाए तो बीमारियों की संभावनाएँ ही खतम हो जाएँगी। रागों की प्रकृति-स्वभाव-रस के आधार पर ही इनका उपचार निर्भर करता है।

रस हमारे मन में स्थिति भावों को जाग्रत करते हैं और ये भाव जैसे क्रोध, मोह, खुशी, भय आदि शरीर में स्थिति अंत:स्रावी ग्रंथियों के स्राव की कमी व अधिकता के कारण सक्रिय होते हैं। राग शरीर के अंदरूनी विभिन्न अंगों को प्रभावित कर शरीर को स्वस्थ व दीर्घायु रखते हैं।

भावों का उतार-चढ़ाव विशेष रूप से हमारे रक्त-प्रभाव को प्रभावित कर मस्तिष्क की कार्यप्रणाली को भी प्रभावित करता है। भारत में संगीत मधुर ध्वनि के माध्यम से एक योग-प्रणाली की तरह है।

राग का आधार मधुर लय है। स्वर व लय-ताल का विशेष प्रभाव व्यक्ति के मन व चेतना पर पड़ता है, प्रभावित करता है। धीरे-धीरे यह प्रभाव उपचार बन जाता है। स्वरों व लय की भिन्न-भिन्न प्रक्रियाएँ उसकी शारीरिक क्रियाओं, रक्त संचार, मांसपेशियों आदि में स्फूर्ति उत्पन्न करती हैं तथा विशिष्ट बीमारियों से मुक्ति दिलाती हैं।

संगीत में रस-उत्पत्ति में भी लय सहायक होती है। मंद लय में स्थैर्य एवं गांभीर्य होने के कारण शांत रस का संचार होता है। मध्य लय में थिरकन से अंत:हास्य, करुणा, शृंगार व वात्सल्य रस का संचार होता है। द्रुत अर्थात तेज लय में चपलता आ जाने के कारण शृंगार, वीर, रौद्र व अद्‌भुत रस होते हैं।

संगीत चिकित्सा के अंतर्गत राग को प्रभावी बनाने में बंदिशों में मिलने वाले साहित्यों का महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। शब्दों से अर्थबोध होता है तथा

इनकी रचनाओं से ही श्रोता एक चित्र का निर्माण करता है। अर्थमूलक शब्द जब गाए जाते हैं तो उसकी प्रेषणीयता में कई गुना वृद्धि हो जाती है। अलग-अलग ताल शरीर में अलग-अलग आवृत्ति पैदा करते हैं।

बिगुल का स्वर मन में उत्साह व चंचलता भर देता है। नगाड़े की ध्वनि रक्तचाप नियंत्रित करती है। दुंदुभी सैनिकों में जोश पैदा करती है। शंख यदि प्रतिसेकंड सत्ताईस घनफीट शक्ति से फूँका जाए तो 2,200 फीट के क्षेत्र में रहने वाले बैक्टीरिया मर जाते हैं और 2,600 फीट क्षेत्र के बैक्टीरिया निष्क्रिय हो जाते हैं। इसके साथ ही मलेरिया के कीटाणुओं का दुष्प्रभाव भी खतम हो जाता है।

शंख ध्वनि का प्रभाव मिरगी, मूर्च्छा, कंठमाला, कोढ़ तथा बहरे रोगियों पर सकारात्मक देखा गया है। राग के स्वर केवल मन को ही झंकृत नहीं करते, बल्कि शरीर के अंग-प्रत्यंगों पर भी अपनी तान की छाप छोड़ते हैं।

भारतीय रागों से मस्तिष्क की सिकुड़ी हुई मांसपेशियों को नूतन शक्ति मिलती है। संगीत की स्वर-आकृतियाँ कानों की झिल्लियों को कंपित करती हैं। परिणामत: स्नायु तंत्र के सेंसरी एवं मोटर स्नायु सजग व सक्रिय होकर शारीरिक प्राण-चेतना के प्रवाह को बढ़ा देते हैं।

भारतीय संगीतपद्धति में रागों के गायन-वादन का समय सिद्धांत प्राचीनकाल से चला आ रहा है, जिसे दो भागों में विभाजित किया है। प्रथम भाग, दिन के 12 बजे से रात्रि के 12 बजे तक और दूसरा रात्रि के 12 बजे से दिन के 12 बजे तक माना गया है। इसमें प्रथम भाग को पूर्व भाग और दूसरे को उत्तर भाग कहा जाता है।

इन भागों में जिन रागों का प्रयोग होता है, उन्हें संगीत की भाषा में 'पूर्वांगवादी राग' और 'उत्तरांगवादी राग' भी कहते हैं। रागों को सुनने के लिए विशेष समय निर्धारित किए गए हैं एवं स्वास्थ्य पर अधिक प्रभावशाली होने के लिए इन्हें समयानुसार सुनना चाहिए अन्यथा समय का ध्यान रखकर गायन-वादन नहीं करने से श्रोताओं पर उसका अच्छा प्रभाव नहीं होता, और न ही रसोत्पत्ति संभव हो पाती है।

आयुर्वेद के अनुसार वात, पित्त और कफ दोष दिन के 24 घंटों के दौरान चक्रीय क्रम में कार्य करते हैं। चिकित्सकों की राय में शरीर में प्रात:काल और सायंकाल में अधिक शिथिलता रहती है। जिसका मुख्य कारण प्रोटोप्लाज्म की शक्ति में कमी होना है। किसी कार्य को करने में इस समय खिन्नता व उद्विग्नता बनी रहती है।

शिथिलता के कारण शरीर पर काफी दबाव रहता है। अत: इस समय संगीत शरीर को स्फूर्तिवान करता है। पूजा का वैज्ञानिक कारण भी यही है। संगीत चिकित्सा के माध्यम से शरीर में एंडोर्फिन आदि लाभदायी रसायनों का स्राव बढ़ाकर और मस्तिष्क तरंगों का नियंत्रण कर विभिन्न रोगों का इलाज करते हैं। यह तनाव को कम करता है। इस तरह रागों के अनेक लाभ हैं एवं ये समग्र चिकित्सा का महत्त्वपूर्ण अंग हैं। ❑

ज्यों तिल माही तेल है, ज्यों चकमक में आग।
तेरा साँई तुझ में, जाग सके तो जाग॥
ज्यों नैनों में पूतली, त्यों मालिक संग मांय।
मूर्ख उनको जानिए, बाहर ढूँढ़न जाय॥

—संत कबीर

'नारी सशक्तीकरण' वर्ष

बच्चों से सम्मान के अधिकारी बनें

आजकल माता-पिता और अभिभावकों को शिकायत रहती है कि बच्चे उनका कहा नहीं मानते। नई पीढ़ी में संस्कार नहीं हैं, वे बड़ों का आदर-सम्मान नहीं करते और अपेक्षित इज्जत नहीं देते। बात सत्य होते हुए भी आंशिक रूप से ही सही है। इसकी गहराई में उतरने पर स्पष्ट होता है कि बहुत सीमा तक माता-पिता एवं बड़े-बुजुर्ग भी इसके लिए जिम्मेदार हैं। इस पर विचार आवश्यक हो जाता है, जिसकी समझ के आधार पर बच्चों के लालन-पालन में यदि कुछ बातों का ध्यान रखा जाए, तो बहुत हद तक इस शिकायत से बचा जा सकता है। इस संदर्भ में कुछ विचारणीय बिंदु निम्न प्रकार से हैं।

अनुशासन की जगह तानाशाही—जिन घरों में तानाशाही का माहौल रहता है, वहाँ बच्चों का स्वस्थ-सामान्य विकास नहीं हो पाता। अभिभावकों के दबाव में नन्ही आत्माओं की स्वाभाविक आवश्यकताएँ पूरी नहीं हो पातीं। खेलने-कूदने से लेकर मनोरंजन के बच्चों के अपने तौर-तरीके होते हैं, लेकिन तानाशाही के वातावरण में बच्चों की बहुत सारी स्वाभाविक ख्वाहिशें अधूरी रह जाती हैं और कई पक्ष दमित रह जाते हैं। बड़ा होने पर, दबाव हटने पर फिर ये बच्चे अपनी दबी इच्छाओं को अपने ढंग से पूरा करते हैं, जिसमें अभिभावकों को लगता है कि बच्चे बिगड़ गए, उनके अनुसार नहीं चल रहे। बच्चों का यह विद्रोह बचपन में दबी-कुचली भावनाओं की सहज प्रतिक्रिया रहता है। यदि माता-पिता तानाशाही के बजाय समझदारी व संवेदना के साथ व्यवहार करते तो यह नौबत नहीं आती।

बच्चों की रुचि व आवश्यकताओं को नजरअंदाज करना—जब अभिभावक बच्चों को बच्चा ही मान बैठते हैं और उनकी रुचि, आवश्यकता को नजरअंदाज करते हैं, तो समस्या शुरू हो जाती है और इसकी जगह अपनी इच्छाओं, महत्त्वाकांक्षाओं को थोपने लगते हैं, तो बच्चों की मौलिक प्रतिभा, उनका नैसर्गिक विकास अवरुद्ध हो जाता है। हर बच्चे को ईश्वर ने कुछ मौलिक विशेषताओं के साथ धरती पर भेजा है व सबका अपना-अपना विशिष्ट उद्देश्य है। बड़े लोग इसके अनुरूप घर-परिवार में बच्चों की रुचि व आवश्यकताओं को समझने का प्रयास करें और उन्हें स्वाभाविक ढंग से विकसित होने दें। बड़ा होने पर संतानें ताउम्र माता-पिता एवं अभिभावकों के इस दूरदर्शी रवैए के प्रति कृतज्ञ रहेंगी और हृदय की गहराइयों से इस उपकार से उऋण होने का प्रयास कर रही होंगी।

बिना आचरण का उपदेश—जब बड़े-बुजुर्ग स्वयं मनमाना आचरण करते हैं और बच्चों को नैतिकता व अनुशासन का पाठ पढ़ाते हैं, तो इसका बच्चों पर अधिक प्रभाव नहीं पड़ता। उन्हें लगता है कि जब बड़े स्वयं ऐसा व्यवहार-आचरण कर रहे हैं, तो वे क्यों न करें। बिना आचरण के दिया गया उपदेश निष्प्रभावी रहता है। यदि घर-परिवार व विद्यालय में बड़े लोग अपेक्षा करते हों कि बच्चे व विद्यार्थी उनकी आज्ञा का पालन करें, तो पहले उन्हें स्वयं उस अनुशासन का पालन करना होगा, सिखाए जा रहे नैतिक मानदंडों की न्यूनतम कसौटी पर स्वयं खरा उतरना होगा, तभी बच्चों से अनुशासन की आशा की जा सकती है।

अपने वचनों को न निभाना—यह भी बच्चों को सम्मान का अधिकारी बनने से रोकता है। जब बार-बार बड़े वायदा करते हैं, लेकिन इसको पूरा नहीं करते, तो बच्चों के मन में एक अविश्वास पनपता है। जिसके कारण बच्चों का बाल मन दुविधा में पड़ जाता है और उन्हें सही व गलत को समझने में कठिनाई होती है।

बड़े ऐसी स्थिति में स्वयं ही बच्चों की नजरों में अपना अवमूल्यन कर रहे होते हैं, जो बाद में अपेक्षित आदर-सत्कार न मिल पाने का कारण बनता है, लेकिन तब तक बहुत देर हो चुकी होती है। अत: समय रहते ऐसी चूक को ठीक कर लें और बच्चों से जो वायदा करें, उसे निभाने का भरसक प्रयास करें। आपका ईमानदार प्रयास भी बच्चों को आश्वस्त करेगा कि आप अपने वचन के प्रति ईमानदार हैं। ऐसे में बड़ों की ईमानदारी का संस्कार नई पीढ़ी में सहज रूप से हस्तांतरित हो रहा होगा।

हर समस्या का समाधान, अत्यधिक देख-भाल—बच्चों का अत्यधिक ध्यान भी उनको बिगाड़ने का काम करता है। अत्यधिक प्यार, दुलार से बच्चे बिगड़ते हैं। इसीलिए कहावत प्रचलित है कि एक आँख दुलार की और एक सुधार की। जिस प्रकार एक कुम्हार एक हाथ से अंदर से सहारा देता है और दूसरे से बाहर से चोट मारता है। मात्र अंदर से सहारा देने व बाहर से चोट न मारने पर घड़े को अपेक्षित रूपाकार नहीं दिया जा सकता।

बच्चों को थोड़ा-बहुत कठिन परिस्थितियों में झोंकते रहें, ताकि उनकी संघर्षशक्ति विकसित हो सके। जीवन के कठोर यथार्थ से उनका परिचय आवश्यक है, ताकि आगे चलकर वे जीवन के संग्राम में एक कुशल खिलाड़ी एवं योद्धा की भूमिका में अपने दायित्व का निर्वाह कर सकें। अत्यधिक संरक्षण, लाड़-प्यार बच्चों को अंदर से मजबूत होने से रोकता है।

बड़े होने पर विषम परिस्थिति में वे अग्नि-परीक्षा की घड़ियों में खरा न उतर पाने के समय फिर अपनी परवरिश को ही कोसते हैं। ऐसे में उनके सम्मान की आशा नहीं की जा सकती।

कठिन प्रश्नों के उत्तर नहीं देना व उनसे बचना—यह भी एक विचारणीय पहलू है। प्राय: अभिभावक कठिन प्रश्नों के उत्तर देने से बचते हैं, बल्कि प्रश्न कठिन व जटिल होने पर उन्हें डाँट-डपटकर चुप करा देते हैं, लेकिन इसका बच्चों के कोमल मन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। यह नौबत न आए, इसके लिए अभिभावकों को थोड़ा स्वाध्याय की आदत डालने की आवश्यकता है। जीवन को बड़े लोग यदि सतह पर जिएँगे, तो जीवन के गहरे प्रश्नों के जवाब की आशा-अपेक्षा उनसे नहीं की जा सकती। अत: माता-पिता को स्वयं जीवन जीने की कला का विद्यार्थी बनना होगा, स्वाध्याय की वृत्ति को अपनाना होगा।

युगऋषि के साहित्य में जीवन की हर समस्या के समाधान सूत्र निहित हैं। यदि बच्चों के किसी प्रश्न का उत्तर न मिल रहा हो, तो उसे आगे के लिए टाल सकते हैं व फिर स्वाध्याय व चिंतन-मनन कर इसका समाधान खोजकर उनसे चर्चा कर सकते हैं या अमुक पुस्तक या लेख को बच्चों से साझा कर सकते हैं। उनका यह ईमानदार प्रयास बच्चों को उनके प्रति जिम्मेदारी का बोध कराएगा, जो आगे चलकर उनके लिए आवश्यक सम्मान का अधिकारी बनाएगा।

बच्चों का सम्मान नहीं करना, आदर नहीं देना—यह सबसे गंभीर चूक है, जो माता-पिता को बच्चों के आदर की अधिकारी बनने से रोकती है। बच्चों को बच्चा मान बैठना एक बड़ी भूल रहती है। बच्चे अपनी मासूमियत एवं दैवी प्रकृति के कारण भगवान का साक्षात् रूप होते हैं। उनको छोटी-छोटी बातों पर डाँटने, डपटने व कोसने से

उनका कोमल मन बुरी तरह से आहत होता है, जिसके घाव भरने में फिर समय लगता है। नन्ही आत्माओं का उचित सम्मान-सत्कार के साथ किया गया लालन-पालन उनके आत्मसम्मान को सुदृढ़ करता है, उनके भावी विकास की सशक्त नींव डालता है और बड़े होने पर सहज रूप में वे अपने अभिभावकों के प्रति कृतज्ञता एवं आदर के भाव से भरे होते हैं। यदि इन बातों का ध्यान रखा जाए, तो कोई कारण नहीं कि बच्चे बड़े होकर आपका सम्मान नहीं करेंगे, आपका ध्यान नहीं रखेंगे, आपकी सेवा नहीं करेंगे। आवश्यकता सावधानीपूर्वक सजग भाव के साथ उनका ध्यान रखने की है, उनका लालन-पालन करने की है।

❑

महाभारत की समाप्ति के पश्चात पांडवों का एकछत्र राज्य स्थापित हो चुका था। द्वापर के दिन ढल रहे थे और कलियुग प्रारंभ के संकेत मिल रहे थे। इन्हीं दिनों अर्जुन वेष बदलकर राज्य-भ्रमण को निकले। राह में उन्हें एक कृशकाय ब्राह्मण मिला, जो मार्ग में गिरे अनाज के दानों को बीनकर खाने का यत्न कर रहा था। यह दृश्य देख अर्जुन बोले—"हे ब्राह्मण देव! आप आर्थिक रूप से विपन्न जान पड़ते हैं। आप राजा युधिष्ठिर के पास क्यों नहीं जाते, वे दानी पुरुष हैं; आपकी विवशता का अवश्य मान रखेंगे।" यह सुन ब्राह्मण फूट-फूटकर रोने लगा। विस्मित अर्जुन ने लौटकर जब यह घटना युधिष्ठिर को सुनाई तो वे भी रोने लगे। अर्जुन का असमंजस और बढ़ा। वे भगवान श्रीकृष्ण के पास पहुँचे।

जब यह घटना सुन भगवान श्रीकृष्ण की आँखों से भी आँसू गिरने लगे तो अर्जुन से रहा नहीं गया। उन्होंने भगवान श्रीकृष्ण से सारी घटना का मर्म पूछा।

भगवान श्रीकृष्ण बोले—"अर्जुन! वह ब्राह्मण यह सोचकर रोया कि दिन इतने विषम आ गए हैं कि एक ब्राह्मण को अन्न के लिए किसी के आगे हाथ फैलाने पड़े, युधिष्ठिर यह विचारकर रोए कि धर्म का इतना पतन हो चुका है कि उनके राज्य में ब्राह्मण उनसे अपनी आकुलता बताने में झिझकता है और मैं यह सोचकर रोया कि जल्दी ही एक दिन ऐसा आएगा, जब न कोई ब्राह्मण किसी के आगे हाथ फैलाने में झिझकेगा और न कोई धर्मराज प्रजा के कष्ट से दुःखी होकर रोएगा।"

पूज्य गुरुदेव जैसा मैंने देखा-समझा-29

सत्याग्रहियों की सेना में

सन् 1930 का कांग्रेस संचालित सत्याग्रह आंदोलन शुरू हुआ। तब तक वे 18 वर्ष के हो चुके थे। उन दिनों आतंक बहुत था। गोली चलने, लंबी जेल होने, घर-जायदाद जब्त होने की चर्चा हर किसी के मुँह पर थी। पूज्य गुरुदेव ने निश्चय किया कि अन्याय का प्रतिकार करने के लिए बड़े-से-बड़ा कष्ट सहना चाहिए।

वे सत्याग्रहियों की सेना में भरती हुए। घर वाले चिंतातुर हो उठे। जिस दिन उन्हें जाना था, उससे एक दिन पूर्व ही उन्हें घर में बंद कर लिया गया। न जाने के लिए समझाने से लेकर बल प्रयोग तक के सारे उपाय परिवार द्वारा काम में लाए जा रहे थे, पर जो उचित है उस पर से रत्ती भर टलने की बात स्वीकार नहीं हुई।

रात को टट्टी जाने के लिए घर की कैद से छूटे, नंगे पैर, एक बनियान और नेकर पहने, हाथ में लोटा लिया घने अँधेरे में रास्ता उलटकर चल दिए और घोर अँधियारी, वर्षा के बीच भेड़ियों से भरे घने घोर बीहड़, नदी-नाले पार करते हुए रातोंरात लंबी यात्रा करके आगरा जा पहुँचे। जब तक घरवाले पता लगाने पहुँचे, उससे पहले ही जेल चले गए।

उग्र सत्याग्रहियों में उनकी गणना थी। एक-एक करके तीन बार उन्हें उस अवधि में जेल जाना पड़ा और कुल मिलाकर लगभग चार वर्ष जेल में रहे। जुरमाना हुआ। घर का सामान जब्त और नीलाम हुआ, कई बार बुरी तरह पिटे और एक बार तो घोड़े के पैरों के नीचे कुचले जाने पर इतनी चोट लगी कि जीवन संकट में पड़ गया।

गैर कानूनी कलकत्ता कांग्रेस में उत्तर प्रदेश का जत्था लेकर पहुँचे तो वहाँ गोलियों की बौछार से जहाँ कितने ही साथी खेत रहे, वहाँ वे आश्चर्य की तरह बचे रहे। बंगाल की आसनसोल जेल में इन्हें फिर बंद रखा गया।

उन दिनों की उनकी अनेकों दुस्साहसपूर्ण घटनाएँ हैं, जिनमें सन् 1942 की रोमांचकारी घटनाएँ तो ऐसी हैं, जिन्हें सुनते ही पसीना छूटता है। ऐसी घटनाएँ न केवल उनके द्वारा योजनाबद्ध रूप से संचालित होती रहीं, वरन स्वयं भी वे बढ़-चढ़कर उनमें भाग लेते रहे। ऐसा दुस्साहसी व्यक्ति यति भी हो सकता है और मृत्यु से अठखेलियाँ करने वाला, इतना दुस्साहसी भी हो सकता है, यह एक अनोखी बात लगती है, पर है सत्य।

इन घटनाओं के संदर्भ में उनका कहना यही था—आत्मा की अमरता और मृत्यु को वस्त्र की तरह बदलने जैसी सामान्य घटना मानने की गीता की शिक्षा सदुद्देश्य के लिए बड़े-से-बड़ा दुस्साहस कर गुजरने की ही तो शिक्षा देती है। ❑

मनुष्य के कार्य, उसकी भावनाओं, विचारों का भी जितना व्यापक आधार होगा, उतनी ही क्षमताएँ शक्तियाँ भी व्यापक बनेंगी। उनके लिए असंभव नाम का कोई शब्द नहीं रह जाता और प्रकृति भी अपने नियमों का व्यतिरेक करके उन्हें रास्ता देती है।

शिक्षा में जीवन प्रबंधन के प्रयोग

आज शिक्षा का क्षेत्र परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अंतर्गत इसमें आमूलचूल परिवर्तन की तैयारी है, जिसमें पाठ्यक्रम के तौर पर बहुत कुछ कार्य हो चुका है और धरातल पर अभी बहुत कुछ किया जाना शेष है। उच्च शिक्षा केंद्रों में तथा विश्वविद्यालयों में ढर्रा अभी भी इंडस्ट्री रेडी स्टुडेंट्स को तैयार करने तक सीमित है; जबकि आवश्यकता लाइफ रेडी स्टुडेंट्स को तैयार करने की है।

मात्र सैलरी पैकेज तक सीमित शिक्षा से युवा पीढ़ी का भला होने वाला नहीं, न ही समाज- राष्ट्र और विश्व मानवता का। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि रोजगार सुनिश्चित करना शिक्षा का पहला उद्देश्य है, जिससे उसके जीवन की रोटी-कपड़ा-मकान, घर-परिवार का स्वास्थ्य-शिक्षा-पोषण एवं समाज में सम्मानपूर्ण जीवन की मूलभूत आवश्यकताएँ पूर्ण हो सकें, लेकिन इसके पश्चात भी बहुत कुछ शेष रह जाता है।

जीवन बहुत व्यापक एवं गहन है। सामाजिक एवं लौकिक इच्छाओं की पूर्ति के बाद उसके गहनतम अंतराल का भी पोषण होना चाहिए। जिसे मनोवैज्ञानिक मेटा नीड के रूप में परिभाषित कर रहे हैं। शिक्षा में विद्यार्थी की दैवी संभावनाओं एवं आध्यात्मिक आयाम के विकास का भी प्रावधान होना चाहिए। इसी के साथ समग्र शिक्षा का खाका तैयार होता है। भारत में प्रचलित शिक्षा की गुरुकुल परंपरा में इस समग्र शिक्षा की व्यवस्था रहती थी।

मानव जीवन के मर्मज्ञ ऋषि-मुनियों के आश्रम में विद्यार्थी ज्ञानार्जन कर अपना सर्वांगीण विकास सुनिश्चित करते थे। वेद-उपनिषद् में ऋषियों का पहला उद्‌घोष रहता था—

आत्मानम् विद्धिः।

अर्थात पहले स्वयं को जानो। इसी आधार पर आत्मज्ञान से लेकर आत्मसाक्षात्कार जीवन के प्रधान उद्‌देश्य रहते थे। इसी परंपरा में युगनायक स्वामी विवेकानंद ने चरित्र-निर्माण करने वाली आध्यात्मिक शिक्षा पर बल दिया, जिससे व्यक्तित्व में अंतर्निहित पूर्णता व्यक्त हो सके। महर्षि अरविंद के शब्दों में भी शिक्षा का उद्‌देश्य मन और आत्मा का सम्यक विकास है।

परमपूज्य गुरुदेव ने भी शिक्षा ही नहीं, विद्या का उद्‌घोष किया और दोनों के समन्वय की बात की, जिसके आधार पर व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास संभव होता है। युगऋषि की संकल्पना पर आधारित देव संस्कृति विश्वविद्यालय में प्रारंभ से ही इसी सर्वांगीण शिक्षा पर बल दिया गया और विषयगत पढ़ाई के साथ गीता-ध्यान की कक्षाओं के साथ जीवन प्रबंधन की कक्षाएँ संचालित की गईं। जिसके अंतर्गत लाइफ स्टाइल मैनेजमेंट, स्टडी मैनेजमेंट, रिलेशनशिप मैनेजमेंट, सक्सेसफुल पर्सनेलिटी, कम्यूनिकेशन स्किल, कैरेक्टर बिल्डिंग, क्रिएटिव एक्सीलैंस, टीम बिल्डिंग एंड लीडरशिप और स्प्रिचुअल एक्सलेंस जैसे विषयों को सेमेस्टर-दर-सेमेस्टर पढ़ाया जाता है।

सर्वांगीण जीवन-दृष्टि एवं जीवनशैली इनका आधार हैं तथा व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास इनका उद्देश्य है। आज का दौर जीवनशैली के संकट का है, जिसके कारण मानवता तमाम तरह के मनोदैहिक रोगों की चपेट में है।

आहार-विहार का असंयम, अस्त-व्यस्त दिनचर्या, नकारात्मक एवं दूषित चिंतन, अमर्यादित आचरण विद्या परिसरों में आएदिन देखने को मिलते हैं। जीवन प्रबंधन की समझ इस पर अंकुश लगाती है और विद्यार्थियों को एक अनुशासित जीवन के महत्त्व से परिचित कराती है। एक विद्यार्थी के रूप में पहला कर्त्तव्य अध्ययन रहता है, ज्ञानार्जन करना रहता है, लेकिन इसके लिए लक्ष्य स्पष्ट होना चाहिए।

लक्ष्य-निर्धारण में जीवन प्रबंधन कक्षाएँ सहायता करती हैं। कैरियर गोल व लाइफ गोल का चयन कैसे हो, इनका समन्वय किस तरह संभव है, इसकी समझ विकसित होती है। इसी के साथ तनाव व समय का प्रबंधन आवश्यक हो जाता है और दोनों का गहरा अंतर्संबंध रहता है। जो विद्यार्थी नित्य आधार पर समय का सदुपयोग नहीं कर पाते, वे ही परीक्षा के पलों में तनावग्रस्त होते हैं।

समय प्रबंधन के अंतर्गत कक्षाओं से लेकर होमवर्क एवं परीक्षा जैसे महत्त्वपूर्ण और अनिवार्य कार्य नैष्ठिक रूप से संपन्न करना सिखाया जाता है। व्यायाम, स्वाध्याय, डायरी लेखन, ध्यान, कौशल विकास जैसी क्रियाओं को जीवनचर्या में स्थान देना होता है और अनचाहे फोन, शादी-विवाह, मनोरंजन आदि से निपटना होता है और व्यसन, नशा, मोबाइल की लत को त्यागकर अपने मनोयोग, ऊर्जा एवं समय को अध्ययन व रचनात्मक कार्यों में नियोजित करते हुए एक सफल एवं सार्थक विद्यार्थी जीवन को गढ़ना होता है।

बौद्धिक विकास के लिए आवश्यक है कि कक्षा की पढ़ाई के साथ नित्य पुस्तकालय में कुछ समय बिताया जाए। मानक पुस्तकों का अध्ययन करें, जिससे वे विषय को गहराई से जान सकें। नित्य समाचारपत्रों-पत्रिकाओं, शोध जर्नल्ज आदि का भी पाठ करें, जिससे विश्व भर में हो रही नई खोज व अनुसंधान से अपने विषय के क्षेत्र में अद्यतन रह सकें।

भावनात्मक विकास जीवन प्रबंधन का अन्य महत्त्वपूर्ण पहलू है। विद्यार्थियों का भावनात्मक विकास हो, मानसिक रूप से वे मजबूत बनें, इसके लिए इच्छाशक्ति के विकास से लेकर अनुशासित जीवन का महत्त्व समझाया जाता है।

इमोशनल इंटेलिजेंस की समझ व्यक्ति को भावप्रवण बनाती है। इसी के साथ व्यक्ति एक अच्छा श्रोता बनता है, जिससे संबंधों में प्रगाढ़ता आती है तथा वह समायोजन करते हुए मिल-जुल कर रहना सीखता है। संवाद कौशल जीवन प्रबंधन का व्यवहारोपयोगी अंग है, जिसके अंतर्गत वाणी के सदुपयोग से लेकर प्रभावी संवाद का शिक्षण दिया जाता है।

अंतर्व्यक्ति संवाद एवं समूह संवाद से लेकर अंत:व्यैक्तिक संवाद के सूत्र समझाए जाते हैं। वाणी का मित, मधुर व कल्याणी स्वरूप तथा सत्यं-शिवं-सुंदरम् का भाव किस तरह से विवाद के स्थान पर संवाद को संभव बनाता है, समस्या की जगह समाधान की बात करता है तथा व्यक्ति को सकारात्मक परिवर्तन का हिस्सा बनाता है। व्यक्ति में निहित रचनात्मक क्षमताओं का विकास जीवन प्रबंधन का महत्त्वपूर्ण पहलू है कि विद्यार्थी अपनी सृजनात्मक क्षमताओं को पहचानें।

ईश्वरप्रदत्त कल्पनाशक्ति, विचारशक्ति, भावशक्ति, अंतर्प्रज्ञा के महत्त्व को समझें और अपने व्यक्तित्व के विकास में इनका उपयोग करें तथा सृजनात्मकता की मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया को समझते हुए अपनी सृजनात्मक उत्कृष्टता की ओर अग्रसर

हों। चरित्र निर्माण जीवन प्रबंधन का एक आधारभूत पहलू है। हालाँकि शिक्षण संस्थानों में यह एक अपेक्षित विषय है। शायद ही इस पर कहीं अधिक चर्चा होती हो। चरित्र का अर्थ है मन, वचन व कर्म की एकता।

इनके बीच दूरी जितनी कम होगी, चरित्र का गठन उतना बेहतर माना जाएगा। ईमानदारी, समझदारी, जिम्मेदारी और बहादुरी जैसे मानसिक गुणों के अभ्यास के साथ इसका गठन होता है। इनसे युक्त व्यक्ति एक आदर्श विद्यार्थी के रूप में प्रेरक मिसाल बनता है और आगे चलकर एक आदर्श शिक्षक, कुशल प्रोफेशनल, श्रेष्ठ नागरिक तथा प्रेरक नेतृत्व के रूप में समाज का मार्गदर्शन करता है।

स्व-नेतृत्व जीवन प्रबंधन का एक महत्त्वपूर्ण पहलू है। प्रभावी नेतृत्व के लिए स्व-नेतृत्व पर पहले कार्य करना होता है। यदि आपका लक्ष्य स्पष्ट, अंत:प्रेरित है, तो समय का प्रबंधन सही होगा। सोच सकारात्मक रहेगी। दूसरों के प्रति संवेदनशीलता रहेगी। शालीनता, विनम्रता, उदारता, सहिष्णुता के साथ सहकार का भाव रहेगा। तो विषय की पकड़ के साथ जीवन की समझ भी गहरी होगी और एक प्रेरक नेतृत्व रूपाकार ले रहा होगा।

इसके साथ आध्यात्मिक विकास व्यक्तित्व विकास में नई ऊँचाई व गहराई देता है। नित्य कुछ समय स्वाध्याय के लिए, सत्संग के लिए निकालें। नित्य डायरी लेखन करें, गहन आत्मविश्लेषण के साथ व्यक्तित्व के हर आयाम में नित निखार लाएँ। कुछ देर ध्यान का अभ्यास करें।

प्रार्थना को जीवन में स्थान दें। परससत्ता से जुड़ते हुए आत्मतत्त्व को जाग्रत करें इसे विकसित करें। सार रूप में प्रतिदिन अपने शारीरिक फिटनेस का, मानसिक स्वास्थ्य का, बौद्धिक विकास का न्यूनतम कार्यक्रम सुनिश्चित करें। साथ ही जीवन में आगे बढ़ने के लिए आवश्यक कौशल विकास पर भी ध्यान दें।

आध्यात्मिक विकास के अंतर्गत नित्य एक सेवाकार्य बिना किसी अपेक्षा के करें। इसके साथ परमपूज्य गुरुदेव के बताए संयम, स्वाध्याय, सेवा, साधना के उद्देश्य पूर्ण हो रहे होंगे। जीवन में उपासना, साधना एवं आराधना की त्रिवेणी में नित्य स्नान का क्रम बन रहा होगा।

विद्यार्थी जीवन में रोपे गए जीवन प्रबंधन के पाठ जीवन में क्रमिक रूप में फलित होते हैं। इसके साथ जीवन में बाह्य उत्कृष्टता और आंतरिक शांति का समावेश होगा। जीवन ऋद्धि-सिद्धि के पथ पर अग्रसर होगा।

सांसारिक उपलब्धि के साथ आंतरिक संतुष्टि का भाव विकसित होगा। जीवन समग्र सफलता के पथ पर अग्रसर होगा और एक स्वस्थ, सुखी, सफल एवं प्रसन्न जीवन रूपाकार ले रहा होगा। अपने साथ दूसरों के काम आने के भाव के साथ आप एक अर्थपूर्ण एवं सार्थक जीवन जी रहे होंगे, जो मानव जीवन का उद्देश्य है। ❑

विषयद्वीपिनो वीक्ष्य चकिताः शरणार्थिनः।
वशन्ति झटिति क्रोडन्निरोधैकाग्र्य सिद्धये॥

—अष्टावक्र गीता

अर्थात विषयरूपी व्याघ्र को देखकर उससे भयभीत हुआ मूढ़पुरुष शरण की आकांक्षा से चित्त-निरोध और एकाग्रता की सिद्धि के लिए ध्यान की गुफा में प्रवेश करता है।

▶ 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◀

प्रज्ञायोग का दर्शन

मनुष्य जीवन का सार उसका अपना व्यक्तित्व है। यदि व्यक्तित्व सुविकसित, संतुलित और क्षमतावान है तभी कुछ सार्थकता बन पड़ती है अन्यथा व्यक्तित्व के अभाव में दुनिया की सारी चीजें निरर्थक ही हैं। वर्तमान परिदृश्य में जितनी भी मौजूदा समस्याएँ व विसंगतियाँ हैं, उन सभी के मूल में व्यक्ति के व्यक्तित्व की कमजोरियाँ ही सन्निहित हैं।

यहाँ एक स्वाभाविक प्रश्न मन में आ सकता है कि ये कमजोरियाँ-कमियाँ आखिर क्यों हैं व्यक्तित्व में? क्या मनुष्य स्वयं अपने जीवन में कमजोर व्यक्तित्व, रुग्ण व्यक्तित्व, खंडित व्यक्तित्व की इच्छा करता है, तो इसका सीधा उत्तर है— कभी नहीं।

कोई भी अपने व्यक्तित्व को छोटा, संकीर्ण और खंडित नहीं देखना चाहता है। तो फिर व्यक्तित्व समस्याओं का कारण क्या है ? कारण सिर्फ यह है कि मनुष्य अपने जीवन विकास में अन्य सभी पहलुओं की तुलना में व्यक्तित्व की ओर सबसे कम ध्यान दे रहा है।

उसकी जीवनचर्या, कार्य, पारिवारिक-सामाजिक रिश्तों के ताने-बाने, मान, प्रतिष्ठा, धन, पद—सब कुछ उलझे जीवन को करीब से टटोलें तो पता चलेगा कि उसमें व्यक्तित्व के निर्माण एवं विकास जैसी बातों के लिए कहीं कोई समय या स्थान है ही नहीं।

यही वह कारण है, जिसके फलस्वरूप मनुष्य का व्यक्तित्व विसंगतियों से भरता जा रहा है और बाह्य एवं आंतरिक जीवन में सैकड़ों समस्याओं का कारण बन बैठा है। हमारी प्राचीन भारतीय जीवनपद्धति में इस ओर समुचित ध्यान दिया जाता था और यदि व्यक्तित्व-निर्माण में कहीं कोई कमी रह भी जाए तो उसे पूरा करने के लिए पर्याप्त उपाय भी मौजूद रहते थे।

वर्तमान में ऐसी व्यवस्था नहीं है और जीवन में भाग-दौड़, तनाव व अस्त-व्यस्त जीवनशैली ने वस्तुस्थिति को और भी जटिल कर दिया है। आज जब चहुँओर विकारों की चर्चा की जाती है, विकास के मानदंड निर्धारित किए जाते हैं और विकास के आदर्श स्थापित किए जाते हैं तो फिर व्यक्तित्व-विकास का क्षेत्र क्यों पीछे रहे ?

व्यक्तित्व-विकास की महत्ता तो इतनी ज्यादा है कि इसके अभाव या उपेक्षा में अन्य सभी जीवन-विकास के आयाम निरर्थक हो जाते हैं। देव संस्कृति विश्वविद्यालय में व्यक्तित्व-विकास के सिद्धांतों, प्रक्रियाओं एवं तकनीकों को लेकर निरंतर शोध-अनुसंधान के कार्य संपन्न किए जाते रहे हैं। अनुसंधान की इसी शृंखला में एक विशिष्ट शोध अध्ययन का कार्य वर्ष-2022 में संपन्न किया गया है।

परमपूज्य गुरुदेव आचार्य श्रीराम शर्मा जी द्वारा प्रणीत 'प्रज्ञायोग दर्शन' को व्यक्तित्व-विकास की समग्र प्रणाली एवं प्रक्रिया के रूप में प्रस्तुत करने वाला यह अध्ययन सामयिकता के संदर्भ में अत्यंत उपादेयी एवं प्रासंगिक है।

इस शोध अध्ययन को विश्वविद्यालय के प्राच्य अध्ययन विभाग (दर्शन शास्त्र) के अंतर्गत शोधार्थी नंदकिशोर द्वारा श्रद्धेय कुलाधिपति डॉ० प्रणव पण्ड्या जी के विशेष संरक्षण एवं डॉ० शशिकला साहू के निर्देशन में पूर्ण किया गया है।

▶'नारी सशक्तीकरण' वर्ष◀

इस अध्ययन का विषय है—'**व्यक्तित्व-विकास के परिप्रेक्ष्य में आचार्य पं. श्रीराम शर्मा के प्रज्ञायोग दर्शन का विवेचनात्मक अध्ययन।**' सैद्धांतिक एवं विवेचनात्मक विधि पर आधृत इस शोधकार्य को कुल 7 अध्यायों में विभाजित कर प्रस्तुत किया गया है।

प्रथम अध्याय **विषय प्रवर्तन** है। इसके अंतर्गत व्यक्तित्व-विकास के महत्त्व, आवश्यकता और प्रासंगिकता को प्रस्तुत करते हुए आचार्य जी के व्यक्तित्व और कर्तृत्व का विवेचन किया गया है। उपनिषदों में मानव व्यक्तित्व को 5 आवरणों से विनिर्मित बताया गया है। सांख्य-योग आदि शास्त्रों में स्थूल, सूक्ष्म एवं कारणशरीर के रूप में मानव व्यक्तित्व के स्वरूप की विवेचना की गई है।

गीता में आत्मा को व्यक्तित्व का सार बताते हुए सात्त्विक, राजसिक और तामसिक व्यक्तित्व की व्याख्या है। इसी तरह भारतीय शास्त्रों और ज्ञान-विज्ञान की विधाओं में मानव व्यक्तित्व का स्वरूप उसमें अंतर्निहित चेतना स्तरों के आधार पर भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों से प्रस्तुत किया है।

सबका सार यही है कि मानव जीवन में उसका व्यक्तित्व, भीतर की आंतरिक विशेषताओं व चेतनात्मक अवस्थाओं में निहित है। इनमें परिवर्तन, रूपांतरण एवं विकास कर व्यक्तित्व को भी पूर्ण बनाया जा सकता है। व्यक्तित्व-विकास की समग्र पद्धति के रूप में योग का प्राचीनकाल से महत्त्व रहा है।

यह ऋषियों की चिर नूतन विधा है, जिसे व्यक्तित्व के सर्वविध विकास एवं कल्याण के लिए सदैव से प्रयुक्त किया जाता रहा है। योग की इसी विधा में परमपूज्य गुरुदेव का प्रज्ञायोग दर्शन एक विशिष्ट आयाम है। परमपूज्य गुरुदेव का जीवन, साधना और तपश्चर्या का पर्याय रहा है। अध्यात्मवेत्ता युगऋषि के रूप में उन्होंने आधुनिक जगत् को नवनिर्माण का नूतन मार्ग दिखाया है।

उन्होंने अखिल विश्व गायत्री परिवार की संस्थापना कर विश्व को विचार क्रांति जैसी युग की महान परिवर्तनकारी योजनाओं का उपहार दिया है। उनके बहुआयामी और विराट जीवन दर्शन का एक महत्त्वपूर्ण आयाम है—प्रज्ञायोग दर्शन।

अध्ययन का द्वितीय अध्याय '**व्यक्तित्व की विभिन्न अवधारणाएँ एवं स्वरूप**' है। इसके अंतर्गत व्यक्तित्व का अर्थ एवं परिभाषाएँ, व्यक्तित्व की संरचना, व्यक्तित्व के विविध आयामों तथा व्यक्तित्व-विकास की प्रक्रियाओं का विवेचन किया गया है। सामान्य दृष्टि से व्यक्तित्व का अर्थ व्यक्ति के बाह्य रूप तथा व्यवहार के गुण आदि से है। मनोवैज्ञानिकों ने इसे आदतों, दृष्टिकोण व विशेषताओं का संगठन बताया है। दार्शनिक दृष्टिकोण में व्यक्तित्व जीवन की पूर्णता का आदर्श है। इसमें व्यक्ति की आंतरिक व बाह्य विशेषताएँ एवं विलक्षणताएँ सन्निहित होती हैं।

परमपूज्य गुरुदेव के अनुसार गुण, कर्म व स्वभाव का समुच्चय ही व्यक्तित्व है। व्यक्तित्व के अनेक आयाम होते हैं, जैसे—शारीरिक, मानसिक, व्यावहारिक, भावनात्मक, आध्यात्मिक आदि। आचार्य जी ने चिंतन, चरित्र और व्यवहार के रूप में व्यक्तित्व के 3 आयाम बताए हैं। इनका संबंध शरीर, मन और आत्मा से है, इन्हें ही शास्त्रीय भाषा में स्थूल, सूक्ष्म और कारणशरीर कहा गया है।

व्यक्तित्व को विकसित बनाने वाली विभिन्न प्रक्रियाएँ; जैसे—योग, तप, साधना, संस्कार आदि प्रचलित हैं। परमपूज्य गुरुदेव ने इन्हीं सब के सार रूप को आधार बनाकर जीवन-साधना का नाम दिया है। इसमें समर्थ मार्गदर्शक, आदर्शों के प्रति समर्पण, निष्काम कर्म एवं सेवाभाव और आध्यात्मिक वातावरण के पहलुओं का समावेश है। जीवन-साधना की धुरी पर चलकर प्रत्येक व्यक्ति अपने चिंतन, चरित्र और व्यवहार का

परिमार्जन कर विकसित व्यक्तित्व के लक्ष्य को सहज प्राप्त कर सकता है।

शोध अध्ययन का तृतीय अध्याय है—**आचार्यश्री की दृष्टि में व्यक्तित्व-विकास**। इसके अंतर्गत चिंतन, चरित्र और व्यवहार की उत्कृष्टता का विस्तृत विवेचन किया गया है। आचार्य जी के अनुसार ये तीनों व्यक्तित्व-विकास के प्रमुख सोपान है। चिंतन में उत्कृष्टता और व्यवहार में आदर्शवादिता से मानव-जीवन गरिमा प्राप्त करता है। चिंतन से विचार परिपक्व होते हैं और विचारों की, जीवन की दिशा और दशा में महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है, अत: सदैव सद्विचारों का अवलंबन ही चिंतन की उत्कृष्टता का आधार बनता है।

विचारों में विकृति ही व्यक्तित्व में समस्या उत्पन्न कर अनेक समस्याओं का कारण बनती है। विचारों के शोधन और परिमार्जन के लिए उन्होंने 'विचार क्रांति' का सूत्रपात किया, जिसका एकमात्र उद्देश्य मनुष्य मात्र को सद्विचारों द्वारा सन्मार्ग की ओर प्रेरित करना रहा है, लेकिन विचारों और चिंतन के साथ अच्छे आचरण का जुड़ना भी आवश्यक है।

चरित्र की उत्कृष्टता का मर्म भी यही है कि श्रेष्ठ चिंतन को आचरण में उतारा जाए। अच्छा चरित्र मानवीय व्यक्तित्व की सर्वोत्तम विभूति है। चरित्र का वास्तविक संबंध बाह्य जगत् से नहीं, अपितु भीतर के सद्गुणों, संस्कारों से है। ये ही मनुष्य के व्यक्तित्व को मूल्यवान बनाते हैं। संयम, सदाचार, कर्त्तव्यपरायणता, सादगीपूर्ण जीवन, विनम्रता, सेवा, सहिष्णुता, साहस, विवेक जैसे अनेक सद्गुण चरित्रवान व्यक्तित्व का परिचय कराते हैं। व्यवहार तीसरा सोपान है—इसे व्यक्तित्व का दर्पण भी कहा जाता है।

चिंतन और चरित्र तो व्यक्ति के भीतर की घटना है, लेकिन व्यवहार से ही उसका व्यक्तित्व वास्तविक अभिव्यक्ति प्राप्त करता है। अत: व्यवहार की उत्कृष्टता भी विकसित व्यक्तित्व का महत्त्वपूर्ण आयाम है।

शोध का चतुर्थ अध्याय है—**आचार्य पं. श्रीराम शर्मा जी के दर्शन में प्रज्ञायोग की साधना**। इसके अंतर्गत व्यक्तित्व विकास की समग्र प्रणाली के रूप में प्रज्ञायोग-साधना के दर्शन का विवेचन किया गया है।

प्रज्ञायोग-साधना के दो आयाम हैं—

(i) सैद्धांतिक पक्ष और

(ii) व्यावहारिक पक्ष।

सैद्धांतिक पक्ष के छह प्रमुख आयाम हैं—

(i) आत्मबोध

(ii) तत्त्वबोध

(iii) आत्मसमीक्षा

(iv) आत्मसुधार

(v) आत्मनिर्माण और

(vi) आत्मविकास।

इसी के साथ व्यावहारिक पक्ष के भी छह आयाम एवं अभ्यास हैं, यथा—

(i) उपासना

(ii) स्वाध्याय

(iii) संयम

(iv) तप

(v) सेवा

(vi) प्रज्ञायोग-व्यायाम।

प्रज्ञायोग-साधना के इन सभी आयामों एवं अभ्यास आदि प्रक्रियाओं का विस्तृत विवेचन इस अध्याय में किया गया है।

शोधार्थी का मत है कि प्रज्ञायोग-साधना का दर्शन वर्तमान समय के लिए अत्यंत उपयोगी और लाभकारी है; क्योंकि यह ऐसा युगानुरूप चिंतन एवं जीवन दर्शन है, जिसमें मनुष्य जीवन की आंतरिक एवं बाह्य समस्त समस्याओं के समाधान और व्यक्तित्व के समग्र विकास के सभी महत्त्वपूर्ण तत्त्व सम्मिलित हैं। सैद्धांतिक, व्यावहारिक एवं

क्रियात्मक पहलुओं का समुचित समन्वय पूज्य गुरुदेव के प्रज्ञायोग को सर्वथा नूतन और अद्वितीय जीवन दर्शन बनाता है।

पंचम अध्याय '**व्यक्तित्व-विकास एवं प्रज्ञायोग दर्शन**' है। इसके अंतर्गत प्रज्ञायोग के संदर्भ में व्यक्तित्व-विकास की अवधारणा, स्वरूप, प्रक्रिया एवं व्यावहारिक सूत्रों का विवेचन किया गया है। प्राचीन ऋषि-मुनियों ने व्यक्तित्व-विकास को ध्यान में रखते हुए ही मनुष्य जीवन के लिए आदर्श जीवनपद्धति का निर्माण किया था।

इसमें व्यक्तिगत जीवन के उत्थान के लिए चार आश्रम और सोलह संस्कार की प्रक्रिया सम्मिलित थी और इसका उद्देश्य चार पुरुषार्थ की प्राप्ति था। सामूहिक जीवन के लिए भी वर्ण-व्यवस्था, पर्व-त्योहार, उपासना, यज्ञ, तप आदि के विधान थे। वर्तमान में ऐसी दृष्टिमय जीवनपद्धति का सर्वथा अभाव है और इसे पूर्णतः लागू करना भी असंभव है।

ऐसे में परमपूज्य गुरुदेव का प्रज्ञायोग दर्शन ऋषि विरासत की जीवनपद्धति के सभी मूलभूत पक्षों का समावेश कर वर्तमान युग के अनुरूप एक समग्र जीवन दर्शन प्रस्तुत करता है, जिसका नाम— प्रज्ञायोग है। यह एक सर्वसुलभ जीवन-साधना के रूप में प्रस्तुत है। इसके व्यावहारिक और क्रियात्मक पक्ष भी अत्यंत सरल हैं, जिसे प्रत्येक व्यक्ति सहजता से स्वयमेव संपन्न कर सकता है।

शोध का षष्ठ अध्याय है—**वर्तमान सदी में आचार्यश्री के प्रज्ञायोग का महत्त्व एवं प्रासंगिकता**। इसके अंतर्गत व्यक्तित्व-विकास को लेकर वर्तमान समय की चुनौतियों-समस्याओं के समाधान के रूप में प्रज्ञायोग के महत्त्व को प्रस्तुत किया गया है। साथ ही एक समग्र जीवन दर्शन के रूप में व्यक्तित्व को समुचित विकसित और संतुलित बनाकर पूर्णता प्रदान करने वाले पूज्य गुरुदेव के इस चिंतन की सामयिक प्रासंगिकता एवं आवश्यकता को स्पष्ट किया गया है।

वर्तमान सदी में वैज्ञानिक क्रांति और आधुनिक जीवनशैली का व्यक्ति के जीवन पर अत्यंत गहरा प्रभाव पड़ा है। इससे मानवमात्र को लाभ तो हुआ ही है, बौद्धिक व्यापकता और भौतिक समृद्धता का संसार उठ खड़ा हुआ है, परंतु व्यक्ति का व्यक्तित्व और चरित्र धराशायी होते चले गए हैं।

मूल्यों का, नैतिकता का अभाव सर्वत्र जीवन को दूभर किए हुए हैं। ऐसे में आचार्य जी द्वारा प्रणीत प्रज्ञायोग दर्शन इस सदी की इन्हीं समस्याओं के कारणों को आधार बनाकर समुचित समाधान बनकर प्रकट हुआ है।

इस चिंतन का वैज्ञानिक दृष्टिकोण अध्यात्मवादी सिद्धांतों पर आधृत है, जो इसे इस सदी का अद्वितीय जीवन दर्शन बनाते हैं। आधुनिक युग के लिए यह व्यक्तित्व की समस्याओं का समर्थ समाधान और व्यक्तित्व विकास का समग्र जीवन दर्शन माना जा सकता है।

अध्ययन का अंतिम सोपान '**उपसंहार**' है। इसके अंतर्गत सभी अध्यायों का सार-संक्षेप प्रस्तुत करते हुए शोध का निष्कर्ष प्रस्तुत किया गया है। चिंतन की विकृति, भाव-संवेदनाओं की संकीर्णता और व्यवहार में नैतिकता एवं आचरण की मूल्यहीनता ने ही व्यक्ति के आंतरिक और बाह्य जीवन में विभिन्न परेशानियाँ खड़ी कर दी हैं।

ये तीनों ही मानव के व्यक्तित्व के महत्त्वपूर्ण आयाम हैं। अतः समाधान के उपाय हों या विकास के प्रयास—इन तीनों आयामों का समन्वय बनाए रखना आवश्यक है। आचार्य जी के प्रज्ञायोग दर्शन में व्यक्तित्व के उक्त तीनों आयामों का समान रूप से स्थान और महत्त्व है। इसलिए यह एक ज्यादा प्रभावी, व्यापक और उपादेयी चिंतन के रूप में सामने आता है। वर्तमान समय में व्यक्तित्व-विकास के लिए अपनाया जा सकने वाला यह सर्वोत्तम सर्वसुलभ जीवन दर्शन है। ❑

कर्म नहीं कर्मफल की इच्छा का त्याग

(श्रीमद्भगवद्गीता के मोक्ष संन्यास योग नामक अठारहवें अध्याय की ग्यारहवीं किस्त)

[विगत किस्त में श्रीमद्भगवद्गीता के अठारहवें अध्याय के दसवें श्लोक की व्याख्या प्रस्तुत की गई थी। इस श्लोक में भगवान सात्त्विक दृष्टि से त्याग करने वाले व्यक्ति के लक्षणों की चर्चा करते हैं। वे कहते हैं कि जो अकुशल कर्म से द्वेष नहीं करता है और कुशल कर्म में आसक्त नहीं होता है—वह त्यागी, बुद्धिमान, संदेहरहित और अपने सत्य स्वरूप में स्थित है। मानवीय स्वभाव है कि हम किसी वस्तु को ग्रहण राग के वशीभूत होकर करते हैं, परंतु उसको त्यागने का कारण द्वेष बन जाता है। ऐसा ही भाव कुशल या अकुशल कर्मों को करने का आधार भी बनता है। यहाँ भगवान कृष्ण, इस शाश्वत सत्य की ओर इशारा करते हैं कि वास्तव में श्रेष्ठ तो वही मनुष्य कहा जा सकता है, जो रागरहित होकर शुभ कर्म करता है एवं द्वेषरहित होकर अशुभ कर्म त्यागता है।

यहाँ भगवान कृष्ण ऐसे मनुष्य को त्यागी कहकर पुकारते हैं; क्योंकि सच्चा त्याग तो तभी है, जब कर्मों को करने या न करने, दोनों में निर्लिप्तता यथावत् बनी रहे। भगवान ऐसे मनुष्य को मेधावी भी कहते हैं; क्योंकि इस तरह से कर्म करने में वही सफल हो सकता है, जिसका व्यक्तित्व ज्ञानरूपी मेधा से सुसज्जित हो। चूँकि उसका ज्ञान, उसकी मेधा सच्चे अनुभव से जन्मे होते हैं, अतः वह व्यक्ति संशयरहित भी होता है और उसके साथ ही वह अपने सत्य स्वरूप में प्रतिष्ठित होकर योगारूढ़ भी हो जाता है।]

इसके उपरांत श्रीभगवान अपना अगला सूत्र कहते हैं—

न हि देहभृता शक्यं, त्यक्तुं कर्माण्यशेषतः।
यस्तु कर्मफलत्यागी स त्यागीत्यभिधीयते॥ *11*॥

शब्दविग्रह—न, हि, देहभृता, शक्यम्, त्यक्तुम्, कर्माणि, अशेषतः, यः, तु, कर्मफलत्यागी, सः, त्यागी, इति, अभिधीयते।

शब्दार्थ—क्योंकि (**हि**), शरीरधारी किसी भी मनुष्य के द्वारा (**देहभृता**), संपूर्णता से (**अशेषतः**), सब कर्मों का (**कर्माणि**), त्याग किया जाना (**त्यक्तुम्**), शक्य नहीं है (**न, शक्यम्**), इसलिए (**तस्मात्**), जो (**यः**), कर्मफल का त्यागी है (**कर्मफलत्यागी**), वही (**सः, तु**), त्यागी है (**त्यागी**), यह (**इति**), कहा जाता है। (**अभिधीयते**)।

अर्थात देहधारी मनुष्य के द्वारा कर्मों का संपूर्ण त्याग असंभव है, अतः जो कर्मफल का त्याग करना जानता है, वही त्यागी है—ऐसा कहा जाता है। कितना अद्भुत सूत्र है यह! यदि इस सत्य को कोई सम्यक दृष्टि से समझ ले तो उसका जीवन स्वतः ही शाश्वत आनंद का स्रोत बन जाए। भगवान कहते हैं कि देहधारी मनुष्य के लिए कर्मों का संपूर्ण त्याग संभव नहीं है, क्यों? क्योंकि ये देह भी तो कर्मफल का ही परिणाम है।

'नारी सशक्तीकरण' वर्ष

भोजन करने पर पेट भरता है, कोई यह सोचे कि हम भोजन करें, पर भोजन से होने वाली तृप्ति का त्याग कर दें तो वो असंभव है। उसी तरह से ये शरीर पूर्वकृत कर्मों का परिणाम है तो कर्मों का त्याग असंभव है, पर जो संभव है—वो है कर्मफल की इच्छा का त्याग। उसका त्याग होने से राग-द्वेष का, सुख-दुःख का, प्रसन्नता-शोक का त्याग हो जाता है। लोग बिना इस गंभीर सत्य को जाने बाहर के त्याग की यात्रा पर निकल पड़ते हैं। घर-परिवार छोड़ते हैं, पद-पैसा छोड़ते हैं, पर जो छोड़ने योग्य है, त्यागने योग्य है—वो बाहर नहीं, भीतर है। बाहर का त्याग करने से मात्र स्थान बदल जाता है—कर्मफल इच्छा यथावत् चलती है।

मृत्यु हो जाने से शरीर छूट जाता है, पर मोक्ष थोड़े ही मिल जाता है? वह प्राप्त करने के लिए उन कामना-वासना-आसक्ति को ही त्यागना होता है। जो कर्मफल की इच्छा को त्याग देते हैं और उनका त्याग ही व्यक्ति को सच्चा त्यागी बनाता है। इस सत्य को कई लोग नहीं समझ पाते कि यह शरीर प्रकृति के ही कार्य-व्यापार का हिस्सा है और प्रकृति निरंतर क्रियाशील है तो प्रकृतिप्रदत्त शरीर को धारण करने वाला उस क्रियाशीलता को कैसे त्याग सकता है?

शरीर है तो शरीर संबंधी कार्य-व्यापार भी हैं। सोना-जागना, उठना-बैठना, खाना-पीना फिर शरीर के साथ की गतिविधियों का नैसर्गिक अंग बन जाते हैं। श्रीभगवान ने इस सत्य को गीता में पहले भी कहा है कि

न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः॥

अर्थात कोई भी मनुष्य किसी भी अवस्था में क्षणमात्र भी कर्म किए बिना नहीं रह सकता; क्योंकि प्रकृति के परवश हुए सब प्राणियों से प्रकृति, प्रकृतिजन्य कर्म करा ही लेती है। प्रकृति शब्द की उत्पत्ति ही क्रियाशीलता से है—**प्रकर्षेण करणम् इति प्रकृतिः**।

प्रकृतिप्रदत्त शरीर में निवास करने वाले मनुष्य की उन वस्तुओं, तत्त्वों के प्रति आसक्ति हो जाती है, जिन्हें वह अपना मानने लगता है। यह आसक्ति कर्मों को करने के प्रति कर्मासक्ति को और भविष्य में उनसे जो परिणाम मिलेगा, उसके प्रति फलासक्ति को जन्म देती है, परंतु जिस व्यक्ति के हृदय में फलेच्छा के प्रति आसक्ति का त्याग जन्म ले लेता है, वह सत्य दृष्टि से त्यागी हो जाता है।

सार रूप में कहें तो यहाँ श्रीभगवान कहते हैं कि बाहर का त्याग वास्तव में त्याग नहीं है, वस्तुतः भीतर का त्याग ही वास्तविक त्याग है। अगर कोई बाहरी परिस्थितियों को त्याग करके एकांत निवास कर भी ले तो वैसा कर लेने से प्रकृति के साथ के संबंधों का त्याग नहीं होता। वो तभी होता है, जब आंतरिक त्याग जन्म लेता है और श्रीभगवान कहते हैं कि वही वास्तविक त्याग है। ❑

सत्येनार्कः प्रतपति सत्ये तिष्ठति मेदिनी।
सत्यं चोक्तं परोधर्मः स्वर्गः सत्ये प्रतिष्ठितः॥

—ब्रह्मर्षि विश्वामित्र

अर्थात सत्य से ही सूर्य तप रहा है, सत्य पर ही पृथ्वी टिकी है। सत्य सबसे बड़ा धर्म है। सत्य पर ही स्वर्ग प्रतिष्ठित है।

समझदारों की नासमझी (पूर्वार्द्ध)

परमवंदनीया माताजी के उद्बोधनों की यह मौलिकता है कि वे चिंतनशील व्यक्ति को समाज के उत्थान के लिए, उसके विवेक का प्रयोग करने के लिए प्रेरित करते हैं तो वहीं भावनाशीलों को उनकी भावना का उपयोग राष्ट्र के जागरण में करने के लिए कहते हैं। ऐसे ही एक प्रस्तुत उद्बोधन में वंदनीया माताजी स्मरण दिलाती हैं कि आज के समय की सबसे बड़ी समस्या समझदारों की नासमझी है। जो करने योग्य कार्य हैं और जो सोचने योग्य विचार हैं, उनको त्यागकर व्यक्ति उन उद्देश्यों के लिए जीवन को लगाता नजर आता है, जो सर्वथा त्याज्य एवं निंदनीय हैं। वंदनीया माताजी 'टॉम काका की कुटिया' पुस्तक का उदाहरण देते हुए सभी साधकों को प्रेरित करती हैं कि वे समाज की विकृतियों को दूर करने एवं राष्ट्र का उत्थान सुनिश्चित करने हेतु कृतसंकल्पित हों। वंदनीया माताजी पूज्य गुरुदेव की तपस्या और उनकी सहृदयता का स्मरण भी प्रत्येक गायत्री परिजन को कराती हैं। आइए हृदयंगम करते हैं उनकी अमृतवाणी को........

समझदारों की नासमझी

गायत्री मंत्र हमारे साथ-साथ बोलें—

"ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।।"

हमारे आत्मीय परिजनो! समझदारों की नासमझी क्या होती है? समझदारों की नासमझी वह होती है कि जब कोई समझदार गलती करता है तो वो क्षम्य नहीं होता और नासमझ गलती करता है, कोई अनपढ़ करता है, कोई बे-समझ करता है, उससे कोई गलती हो गई, भूल हो गई, तो क्षमा कर दिया जाता है; क्योंकि उसमें अक्ल ही नहीं है। वो तो पीछे-पीछे चलने वाला है, लेकिन आज समझदारी का क्या ठिकाना है, व्यक्ति समझदार होते हुए भी नासमझ है।

मैं आज उस घटना को लेकर के चलूँगी, जो विदेशी है। एक अँगरेज था। वो बाहर से आया और घर में आते ही थोड़ा-सा एक मिनट का अंतर हो गया, नौकर ने नमस्कार नहीं किया तो उसके ऊपर लगा कोड़े बरसाने और उसके ऊपर इतने कोड़े बरसाए कि हर कोड़े के साथ उसका खून छलछला आया। एक लड़की उसको देख रही थी, वो तिलमिलाने लगी और उसने कहा भी, अनुनय-विनय भी की कि ऐसा अत्याचार मत करो, यह इनसानियत नहीं है।

इसी तरीके की एक और घटना है। अमेरिका में एक व्यक्ति था, जहाँ गोरे और कालों में भेद है। तो वो वहाँ खेत जोत रहा था। कहीं तो ऐसा है कि बैलों के साथ जुताई होती है। हमारे यहाँ बैल करते हैं, वहाँ घोड़े करते होंगे। तो वहाँ घोड़े के साथ उस नीग्रो को लगा दिया गया और उसे थोड़ी-सी नींद आ गई। नींद आ कैसे गई? नहीं आनी चाहिए। खरीदा हुआ गुलाम है।

अब खरीदे हुए गुलाम की कोई जान होती है? वो तो पशु से बदतर है। पशु से बदतर की जो जिंदगी है और जो उसके साथ में व्यवहार है, वो उसके अनुकूल नहीं है, प्रतिकूल है। उसने भी इतने कोड़े बरसाए उस पर कि वह आह भी न कर सका और धूल में मिल गया। उसने दम तोड़ दिया और वो लड़की चुपचाप देखती रही।

इसी तरीके से एक और घटना है, जिसमें एक दासी को बेचा गया। उसका 3 वर्ष का एक बच्चा था। वह बच्चा अपनी माँ के लिए तड़पता हुआ रह गया और माँ अपने बच्चे के लिए तड़पती रह गई और उसको बेच दिया गया।

"उसने दोनों हाथ फैलाए और कहा कि अरे! मेरा बच्चा क्यों छीनते हो।" किसी माँ से पूछिए कि उसके बच्चे को कोई उठा ले जाए तो कितनी पीड़ा उस माँ को होगी, लेकिन वो नहीं माने और उस दासी को बेच दिया गया, बच्चा अलग और माँ अलग।

टॉम काका की कुटिया

लड़की यह सारा दृश्य देखती रही और यहाँ से जो कहानी शुरू हुई तो उस छोटी-सी एक लड़की ने अपने मन में एक शपथ ली, एक संकल्प लिया। उसके मन के, अंत:करण के भगवान ने कहा कि इस अनीति से जूझना चाहिए और अंत तक जूझना चाहिए। हमको चाहे सजा होगी, चाहे हमारे प्राण जाएँगे, जाएँगे तो जाएँगे, पर हम अपने संकल्प बल से विचलित नहीं होंगे।

उसने एक पुस्तक लिखी, जिसका नाम है— 'टाम काका की कुटिया'। इस पुस्तक के 300 संस्करण छप चुके एवं अन्यान्य भाषाओं में, जाने कितनी भाषाओं में इसे छापा गया और उसने सारे अमेरिका में तहलका मचा दिया। उन दिनों अब्राहम लिंकन वहाँ के राष्ट्रपति थे, जो एक नया कानून बनाने जा रहे थे, जिसमें कि नीग्रो के अधिकारों की बात थी, लेकिन उनके हृदय पर गहरी चोट पहुँची। उनके ऊपर प्रहार हुआ। ऐसा प्रहार किसका हुआ? बंदूक का या तलवार का? नहीं, आप नहीं जानते, शब्दों का प्रहार और विचारों का प्रहार जबरदस्त होता है।

विचारों का प्रभाव

आप क्या समझते हैं कि विचारों का प्रभाव इतना जबरदस्त होता है कि अभी हमारे लड़के ने कहा था कि रावी तट पर संकल्प लिया गया था और स्वतंत्रता मिल करके ही रही। कोई रोक सका क्या? कोई नहीं रोक सका था। हमारी यह हृदयहीनता हमें कहाँ ले जाएगी?

हम समझदार बनते हैं, हम पढ़े-लिखे बनते हैं, फिर ये हृदयहीनता क्यों है, विशालता क्यों नहीं आई? इसी तरीके से एक घटना अभी-अभी की याद आई है और जब मुझे यह याद आती है तो मेरा हृदय तिलमिलाने लगता है कि जिसके घर में बारात आने वाली हो, उसका पिता तैयारियाँ कर रहा हो, उसकी माँ खुशी से तैयारियाँ कर रही हो और उसी दिन उसके निर्दोष बाप की हत्या कर दी जाए जिसका कोई दोष नहीं, अब उस माँ को पूछिए कि उसका क्या हाल होगा?

उस बेटी को देखिए. उसका क्या हाल होगा? जिसके यहाँ अभी गीत गाए जा रहे थे, उत्सव

मनाया जा रहा था, ब्याह—शादी का माहौल था और उसके पिता को भून दिया गया। ये कहाँ की घटना है?

ये हमारे ही राष्ट्र की है। ये दिल्ली की घटना है, जहाँ एक बड़े अधिकारी थे और उनको गोली मार दी गई। यह समझदारों की नासमझी है। यदि इनके मन में समझदारी आ जाए तो? तो फिर ये क्या-से-क्या नहीं कर लेंगे।

वे बहुत कुछ कर सकते हैं, लेकिन समझ में नहीं आता है। तर्क तो बहुत है, पढ़ाई-लिखाई बहुत है, शिक्षा तो बहुत है। शिक्षा का तो क्या कहना है। विज्ञान से लेकर अनेक जाने क्या-क्या किस तेजी से बढ़ती हुई जा रही है। उतने ही अपराध बढ़ते जा रहे हैं।

पुराने वक्त में थोड़े अपराध होते थे, इतने अपराध नहीं होते थे। मैं उसको यह तो नहीं कहती हूँ कि कोई अच्छी बात है, लेकिन जो कोई अपराध करता था, तो उसे कठघरे में रख दिया जाता था और शेर छोड़ दिए जाते थे, जो नोच-नोच करके उसको खा जाते थे। नमक छिड़क दिया जाता था, ताकि यह अपने कसूर को समझने की कोशिश करे कि हमने यह गलती की है और सब देखें, ताकि औरों को हिम्मत नहीं मिले।

समाज की विकृति

आज इतने अपराध बढ़ते हुए चले जा रहे हैं। शिक्षा जितनी बढ़ती हुई चली जा रही है, उससे ज्यादा अपराध बढ़ते हुए चले जा रहे हैं। आखिर क्यों अपराध बढ़ते हुए चले जा रहे हैं? यह कभी विचार किया क्या? नहीं यह विचार नहीं किया। केवल अपने ही लिए जिए, अपना ही पेट भरा, अपने ही प्रचलन के लिए, अपनी ही रोटी के लिए सीमित रह गए।

पराया दु:ख-दरद और पीड़ा ज़रा भी समझ में नहीं आया। एक नाव में तीन व्यक्ति बैठे थे। तो उनमें से एक बोला—जी साहब! जिनने विज्ञान नहीं पढ़ा, जिन्होंने विज्ञान नहीं पढ़ा वो तो कुछ भी नहीं जानता, वह तो महामूर्ख होता है।

उनमें से दूसरा बोला—उसने कहा कि जो इतिहास नहीं जानता, वो कुछ नहीं जानता। इतिहास में क्या है भाई? विज्ञान में क्या है? इतिहास वाला बोला—वाह! कुछ है ही नहीं, बाबर, हुमायूँ और जाने कौन-कौन बैठे हैं। फलाने सन् में पैदा हुए, फलाने सन् में मरे। तुम क्या जानते हो? तीसरा बोला—गणित सबसे बड़ा है और गणित के बाद कुछ नहीं है। मल्लाह जो नाव को चला रहा था, वो सबके ये तर्क सुन रहा था।

तर्क सुनते ही उसने एक बात कही कि भाई साहब! आप ये बताइए कि आपको नाव चलाना आता है क्या? तैरना आता है क्या? उनने कहा—नहीं, तो उसने कहा कि आपका विज्ञान किस काम का है? आपका इतिहास किस काम का है? आपका गणित किस काम का है? तूफान आने वाला है और यह नाव डूबने वाली है और मैं तो ये चला। मैं तो तैरकर पार हो जाऊँगा, लेकिन तुम लोग तैर कर पार नहीं हो सकते और जैसे ही तूफान आया मल्लाह तो कूद करके पार हो गया और वो तीनों-के-तीनों डूब गए। क्यों डूब गए? इसलिए डूब गए कि तर्क तो उनके पास बहुत थे।

बदला जाए दृष्टिकोण यदि

इसमें कोई दो राय नहीं हैं, शिक्षक भी थे, लेकिन समय के अनुसार उनको चलना नहीं आया, यदि समय के अनुसार चलते और समय के साथ-साथ कोई उपाय ढूँढ़ लेते तो संभव है, वो भी पार हो जाते। मैंने आपसे एक और निवेदन किया कि व्यक्ति यदि चाहे तो अपने दृष्टिकोण को बदल दे, **''बदला जाए दृष्टिकोण तो इनसान बदल सकता है।''** दृष्टिकोण को बदल दे तो इनसान

बदलता हुआ चला जाता है। ये हमारी नासमझी है कि समय के अनुसार न हम सँभल पाए, न हम चल पाए, तो इससे ज्यादा नासमझी और क्या हो सकती है? यह नासमझी ही होती है।

"किश्ती ने मोड़ा रुख तो किनारे बदल गए", किनारे बदल जाते हैं। हम नाव का मुँह जिस ओर कर देते हैं, उस ओर ही किनारा आ जाता है। तो फिर यह दृष्टिकोण क्यों नहीं बदला जाता है, ये विचारधारा क्यों नहीं बदली जाती है। हमारी यह विचारधारा जो सड़ी-गली है, इसको हम निकाल करके फेंकें।

कल हम शपथ लेंगे कि राष्ट्र के उत्थान के लिए आजीवन हमें सब कुछ करना है। शायद कल या परसों ही मैंने कहा था कि हमारे राष्ट्र में करोड़ों व्यक्ति हैं। यदि ये करोड़ों व्यक्ति एक समय का भोजन त्याग दें तो राष्ट्र की समस्याएँ बहुत कुछ हल हो सकती हैं, पर क्या कहें इस हृदयहीनता को। मैं इसे हृदयहीनता कहूँगी या हृदयहीनता नहीं, संकीर्णता कहूँगी। कमी है कोई? नहीं। देने वाला होता है तो गरीब भी दे करके खाता है।

गरीब भी खिलाकर खाता है और कंजूस होता है तो वो चाहे उसके पास जितनी अपार संपत्ति क्यों न हो, वो कंजूस-का-कंजूस ही बना रहता है और अगले जन्म में अपने उस धन पर वो साँप बनकर बैठेगा। साथ तो कुछ ले नहीं जा सकता, जैसा इस जन्म में है, वैसा ही उस जन्म में होगा, क्योंकि जैसे संस्कार बनाए हैं, उन संस्कारों के अनुसार ही हमें अगले जन्म में वही मिलने वाले हैं। वही ज्यों-का-त्यों हमें मिलने वाले हैं। इसलिए चौरासी लाख योनियों में घूमते हुए हमें जो यह मनुष्य योनि मिली है, फिर इसका सदुपयोग क्यों नहीं करना चाहिए? इसका दुरुपयोग क्यों करें? सदुपयोग करें, गुरुजी ने यही तो आप लोगों को सिखाया था न कि जिंदगी का श्रेष्ठतम एक भी क्षण मत गँवाइए।

राष्ट्र का उत्थान करें

बेटे! जो क्षण चला गया वो आने वाला नहीं है। वो तो गया पीछे, वो तो पीछे रह गया। आप हर क्षण आगे बढ़ते जाइए और हर क्षण आप विश्वव्यापी चिंतन करिए। अपने राष्ट्र का चिंतन करिए कि

राजा आमात्य जनश्रुति ने महर्षि वसिष्ठ से पूछा—"मैं पुण्यात्मा हूँ। धर्म के नियमों पर चलता हूँ। उपासना में भी चूक नहीं करता। फिर भी न मेरा लक्ष्य ही पूरा होता दिखाई पड़ता है, न भीतर का संतोष ही मुझे प्राप्त है।"

यह सब सुनकर वसिष्ठ जी ने मुस्कराते हुए कहा—"वत्स! सदाचरण और साधना का महत्त्व तो है, किंतु वे दोनों ही स्नेह और सेवा के बिना अपूर्ण रहते हैं। तुम उन दो साधनाओं को अपनाते हुए अपनी अपूर्णता दूर करो और समग्र प्रतिफल प्राप्त करो।"

हम राष्ट्र को क्या दे पाए। किस तरीके से हमारा राष्ट्र खुशहाल बने, खुशहाल ही नहीं, बल्कि इनके दृष्टिकोण को किस तरीके से हम बदलें।

हम विचारों से बदल सकते हैं और हम जैसे हैं, उससे बदल सकते हैं। पहले तो खुद बदलेंगे तो

दूसरे बदलेंगे, जब तक हम नहीं बदलते हैं तो दूसरे नहीं बदलने वाले। इतनी जो भीड़ बैठी है, यह लाखों और करोड़ों का झुंड कम नहीं है। लाखों तो वे हैं, जो कि हमारी पत्रिका के सदस्य हैं और बाकी के वो हैं, जो एक से दस जुड़े हुए हैं। जो पत्रिकाओं को पढ़ते हैं, उनकी गिनती तो है ही नहीं और नाती-पोते, पंती-संती इनकी तो कोई गिनती ही नहीं है। इतनी फौज हमारे पास है।

ये फौज तो जाने क्या कर दे, जाने क्या कर सकती है। गुरुजी ने यह संगठन अकेले बनाया। कोई साथ था उनके? नहीं, एक भगवान उनके साथ था, उनका गुरु उनके साथ था और उनका पुरुषार्थ साथ था।

सारा-का-सारा यह जो पुरुषार्थ आपको दिखाई पड़ रहा है, उनकी सूक्ष्म प्रेरणा दिखाई पड़ रही है, उनकी वो उपासना दिखाई पड़ रही है, जिसमें कि चौबीस-चौबीस लक्ष के 24 पुरश्चरण किए थे। जौ की रोटी खाकर के और छाछ पीकर के अपनी जबान पर कौन लगाम लगा सकता है। जौ हम धोते थे, जौ को पहले गाय को खिलाते थे, फिर उसको सुखाते थे। जो गोबर में से निकलता था, उसे सुखाकर के हाथ से पीसते थे और उसकी रोटी बनाकर हम उनको खिलाते थे।

गुरुदेव की तपस्या

बाहर एक बार जाना हुआ। शुरू-शुरू में तो बोले—जौ का आटा रख दो। मैंने रख दिया। मैंने कहा कि देखिए आप बाहर जा रहे हैं, तो सबकी भावना होती है कि गुरुजी हमारे यहाँ आए हैं तो हमारे यहाँ का पका हुआ भोजन करें। फिर उनकी निष्ठा का, उनकी सुविधा का क्या हुआ।

पहली बार तो मैंने रख दिया, दूसरी बार बोले कि अच्छा तो रहने दो। तुम जौ का दलिया रख दो, तो मैंने कहा कि बात तो वही हो गई, चाहे दलिया रख दो और चाहे आटा रख दो। अच्छा ऐसा है कि एक स्टोव रख दो और बाकायदा स्टोव और सब चीजें मैंने रख दीं। वो बोले—मैं बना लिया करूँगा और खा लिया करूँगा, कभी तो टाइम मिलेगा ही। दो बार तो रख दिया, तीसरी बार मैं अड़ गई।

कभी-कभी मैं भी अड़ जाती थी। वैसे तो बहुत सभ्य हूँ और बहुत विनम्र भी हूँ। जीवन में मेरा किसी से लड़ाई—झगड़ा कभी नहीं हुआ और होगा भी नहीं। तीखा स्वभाव भी मेरा नहीं है कि हर वक्त किसी पर भी बरस पड़ूँ। यह मेरा स्वभाव है ही नहीं, माँ हूँ तो सब की माँ हूँ, पर मैं अड़ गई मैंने कहा कि साहब! मैं नहीं ले जाने दूँगी। मान लीजिए हमारे यहाँ कोई अतिथि आ रहे हैं और हम भोजन बनाकर उनके पास ले जाएँ और वो नहीं खाएँ तो फिर हमको कैसा लगेगा, जरा बताना। आप ही बताइए बुरा लगेगा कि नहीं।

मैंने कहा कि जब हमको बुरा लगेगा तो उनको भी बुरा लगेगा। उनने कहा—"जैसा खाए अन्न-वैसा बने मन।" न मालूम कौन का, कैसा कुधान्य है। मैंने कहा कि धान्य-कुधान्य की ओर नहीं देखना है, हमें उनकी भावनाओं की ओर देखना है। वो हमारे हैं, उसका प्रायश्चित आप घर आकर कर लीजिए। यह बात तो समझ में आ गई और वो करते भी थे।

उस दिन से उनके मन में न मालूम क्यों मेरे लिए इतना सम्मान था कि मैं इसका वर्णन नहीं कर सकती। एक शब्द में मैं यह कहूँ कि उन्होंने माँ से भी ज्यादा अपने मन में मुझे स्थान दिया। मैं बहुत ऋणी हूँ, हजार जन्म भी लूँ तब भी मैं इस ऋण को नहीं चुका सकती। उनके हृदय में मेरे लिए इतना सम्मान और उदारता है कि मैं कह नहीं सकती कि मुझमें क्या विशेषता थी जिससे वे इतने प्रभावित थे।

जब मैं ऊपर सीढ़ी चढ़ती थी तो मेरा हाथ पकड़ करके पहली सीढ़ी से दूसरी पर ले जाते थे। मैंने कहा—साहब ! आप ऐसा क्यों करते हैं कि मुझे देखते ही आप ऐसे खड़े हो जाते हैं, जैसे कोई राष्ट्रपति की अगवानी प्रधानमंत्री करता है। मैं कहती थी कि मैं आ जाऊँगी। आप जब नीचे से आएँगे तो मैं भी आ जाऊँगी।

गुरुदेव की सहृदयता

उनकी विनम्रता, उनका स्वभाव सबके लिए बिलकुल एक-सा था। मुझे मेज पर पहले से ही गिलास में पानी भरा रखा हुआ मिलता था। 5 मिनट लेट हो जाती थी तो प्रणव से यों कहते थे कि प्रणव क्या बात है आज माताजी 5 मिनट लेट कैसे हो गईं। वो तो ठीक साढ़े तीन बजे आ जाती हैं। क्या बात हो गई ? उनकी तबीयत तो नहीं बिगड़ गई। उन पर लोड ज्यादा है न, मेरा भी लोड उनके ऊपर आ गया है देखना तो जरा। यह क्या है ? यह सहृदयता है। यह ऊँचे उठाने की निशानी है। दूसरों को मनोबल देने की बात है। इससे उनके सामने मेरा मस्तक झुक जाता था। वे इतने उदार और इतने विनम्र थे।

मैंने तो भगवान की झाँकी देखी है। मैं क्या कहूँ कि व्यक्ति की भावनाएँ कहाँ से चलती हैं ? बचपन से चलती हैं, पर चलिए किसी की बचपन से चलती हैं और किसी को चलाना पड़ता है। आपको हम चला रहे हैं। वो चले हुए थे, उनके अंतर का जो भगवान था, वो बचपन से पहले से ही जगा हुआ था।

किसान आंदोलन से लेकर के, किसानों के लिए काम करने से लेकर के, बुनता घर खोलने से लेकर, सारे गाँव को रोज़ी-रोटी तक दिलवाने से लेकर उन्होंने अनेक कार्य ऐसे किए जिससे की जनता की भलाई हो, वो काम उन्होंने किया। पढ़ाने का काम किया। लोग यों कहा करते थे कि पंडित जी ! नाम लिखना तो सीख गए, अब आप उर्दू और बता दो। तो वो हँसते थे।

उन्होंने कहा कि देखिए नाम लिखना ही काफी नहीं है। अभी तो आप पुस्तक भी पढ़ना नहीं जानते। पहले पुस्तक पढ़िए और फिर आप शुद्ध भाषा लिखिए। कम-से-कम मिलावट के वो अक्षर तो लिखिए। आप नाम लिख करके ही समझ गए कि अब हमें उर्दू पढ़ा दीजिए। उर्दू भी आपको पढ़ाएँगे। अभी हम प्रौढ़ शिक्षा के बारे में कह रहे थे। वे सारे गाँव के लोगों को इकट्ठा करते थे और उनको पढ़ाते थे। यह मैं उनकी सहृदयता के बारे में कह रही हूँ। समझदारी की बात कह रही हूँ। पहले तो मैंने नासमझी की बात कही थी, लेकिन अब मैं समझदारी की बात कह रही हूँ।

समझदारी से हमें सबक लेना चाहिए कि आखिर हमारा जो चिंतन है, वो किधर जाता है। उनका चिंतन किधर गया ? उनका चिंतन उधर गया है—पहले तो कांग्रेस आंदोलन में कूद पड़े, उनकी माँ तक न रोक सकी, न पत्नी रोक सकी, न घर वाले रोक सके। यहाँ तक कि खुद जेल में थे, बहन की शादी तय कर दी गई।

आप अंदाजा लगाइए कि जिसकी जवान माँ विधवा बैठी हो और जिसके सहारे का एक ही पुत्र हो और वह भी जेल में, घर में लड़की की शादी हो, बताइए जरा उसका क्या हाल होता होगा ? लेकिन नहीं उन्होंने कर्त्तव्य को सबसे ज्यादा माना और अपनाया।

उन्होंने कहा कर्त्तव्य पहला है और बाकी के गौण हैं। अपनी बहन की शादी पक्की करके आया हूँ तो हो ही जाएगी। माँ रोएगी तो रोएगी, पत्नी रोएगी तो रोएगी, मैं क्या कर सकता हूँ, लेकिन मुझे तो काम करना है। सारे किसानों का लगान उन्होंने माफ करा दिया था। इतना जबरदस्त था उनका व्यक्तित्व।

(क्रमशः अगले अंक में समापन)

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

आपको सादर प्रणाम

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel

Shantikunj Rishi Chintan को Subscribe करने के लिए क्लिक कीजिये और Bell बटन को जरूर दबाएं ताकि आप को नोटिफिकेशन मिलते रहे।

Shantikunj Rishi Chintan के विडियो को अपने मित्रों के साथ शेयर जरूर करें।

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel के वीडियो युग निर्माण मिशन के लिए समर्पित है! हमारा एकमात्र उद्देश्य परम पूज्य गुरुदेव के विचारों को जन-जन तक पहुंचाने का है।

आप इन वीडियो को डाउनलोड करके मिशन की गरिमा के अनुरूप प्रयोग कर सकते हैं।

धन्यवाद

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

☞ शांतिकुंज हरिद्वार के Official WhatsApp Channel awgpofficial Shantikunj चैनल को Follow करने के लिए Link पर Click करें https://whatsapp.com/channel/0029VaBQpZm6hENhqlhg453J

Shantikunj WhatsApp:- शांतिकुंज की गतिविधियों से जुड़ने के लिए 8439014110 पर अपना नाम लिख कर WhatsApp करें

आप भी हमारे साथ जुड़ कर इस विचार क्रांति योजना में सहभागी अवश्य बनें।

Rishi Chintan

गीता का सार और महिमा

शांतिकुंज परिसर में इस बार के शारदीय नवरात्र के अवसर पर श्रद्धेय कुलाधिपति डॉ० प्रणव पण्ड्या जी का संध्याकालीन उद्बोधन संपन्न हुआ। इस बार श्रीमद्भगवद्गीता के 18वें अध्याय के 65वें श्लोक से लेकर 73वें श्लोक की व्याख्या की। उद्बोधन का विषय रहा—'**श्रीमद्भगवद्गीता का उपदेश सार और गीता की महिमा**'।

श्रीमद्भगवद्गीता के ये महत्त्वपूर्ण श्लोक श्रीमद्भगवद्गीता का सार उपदेश हैं और साथ ही भगवद्गीता को जीवन में आत्मसात् करने का महामंत्र भी हैं।

अगर इन श्लोकों को हम अपने आचरण में ला सकें, तो यह समझना चाहिए कि भगवद्गीता हमारे जीवन में समा गई। इसलिए नवरात्र के इन 9 दिनों में भगवद्गीता के इन नौ श्लोकों पर चिंतन-मनन किया गया, जिसका सार-संक्षेप इस प्रकार है—

(1) प्रथम दिवस—इस दिन भगवद्गीता के 18वें अध्याय के 65वें श्लोक पर चिंतन-मनन किया गया।

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु।
मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे॥

— *18/65*

भगवान कहते हैं कि हे अर्जुन! तू मुझमें मन वाला हो, मेरा भक्त बन, मेरा यजन करने वाला हो और मुझको प्रणाम कर। ऐसा करने से तू मुझे ही प्राप्त होगा यह मैं तुझसे सत्य प्रतिज्ञा करता हूँ, क्योंकि तू मेरा अत्यंत प्रिय है।

गीता का यह श्लोक और उसका मर्म बहुत गहरा है, इसमें ऐसे 8 सूत्र हैं, जो व्यक्तित्व को रूपांतरित करने में सक्षम हैं। हमारे मन में, हमारे व्यक्तित्व में गाँठें लगी हुई हैं, कौन-सी गाँठें? ये 5 तरह की गाँठें हैं—

(1) कर्म की गाँठ,
(2) विचार की गाँठ,
(3) भावों की गाँठ,
(4) अहंकार की गाँठ और फिर
(5) अविद्या की गाँठ।

ये ऐसी 5 गाँठें हैं, जिन्हें हम खोल नहीं पाते हैं, लेकिन भगवान के बताए हुए सूत्रों को अपनाकर हम इन गाँठों को खोल सकते हैं। जैसे—

(1) कर्म की गाँठ कैसे खुलेगी? अभी हमारे कर्म संकीर्णता में, आसक्ति में अटके हुए हैं, इसमें आसक्ति की, कामना की गाँठें लगी हुई हैं, इन गाँठों को खोलने का सूत्र है—**मद्याजी,** यानी जब सब कर्म भगवान में यजन (यज्ञीय भाव से समर्पण) करोगे, तब कर्म की गाँठें खुलेंगी। कर्म की गाँठ खोलने का मतलब है, कर्मों की धारा को ईश्वर की ओर मोड़ देना।

(2) विचार की गाँठ कैसे खुलेगी? विचारों में द्वंद्व है, विचारों में परेशानियाँ हैं, हमारे विचार बिखरे हुए हैं, बँटे हुए हैं, तो इसकी गाँठ को खोलने का सूत्र है—**मन्मना भव,** मन को भगवान की तरफ मोड़ दो, तो मन की गाँठें खुलने लगेंगी।

(3) फिर तीसरी गाँठ है—भावनाओं की गाँठ। भावनाओं में जो विक्षोभ हैं, भावनाओं में जो ईर्ष्या, द्वेष जैसी बहुत सारी मलिनताओं को हम पाले हुए हैं, उसके कारण भावनाओं में गाँठ पैदा होती जाती है। जैसे ही भावनाओं का रूपांतरण भक्ति में होता है,

वैसे ही भावनाओं की गाँठ खुलने लग जाएगी। इसका सूत्र है—**मद्भक्तो,**

(4) फिर व्यक्तित्व में चौथी गाँठ है—अहंकार की। अहंकार झुकना नहीं जानता, अहंकार हमेशा अपनी अकड़ में रहता है। अत: इस गाँठ को खोलने का सूत्र है—**मां नमस्कुरु,** नमन करो, विनम्र भाव से झुको, हमारी संस्कृति, हमारी सभ्यता झुकने की है; क्योंकि अहंकार की यह गाँठ बड़ी मजबूत गाँठ है। इसका खुलना बहुत कठिन है। यह झुकने से खुलती है।

(5) फिर अंतिम पाँचवीं गाँठ है—अविद्या की। यह कैसे खुलेगी? अभी हम रह रहे हैं—अविद्या में। चारों तरफ विविध प्रकार की चीजें हमें घेरे हुए हैं, जिस क्षण हमें महसूस होने लगेगा, अंदर भी भगवान और बाहर भी भगवान, तब यह गाँठ खुलने लगेगी। इसका सूत्र है—**मामेवैष्यसि**—ईश्वर में वास।

भगवान अपने इस श्लोक में आगे यह भी कहते हैं कि हमने तुमसे यह कोई सामान्य बात नहीं कही, बल्कि तुम्हें बड़ी गूढ़ और रहस्यमयी बात बताई है, यह बात तुम निश्चित रूप से जान लो कि यह बात पूर्णत: सत्य है।

(2) **द्वितीय दिवस**—इस दिन भगवद्गीता के 18वें अध्याय के 66वें श्लोक की व्याख्या एवं विवेचना की गई।

भगवान कहते हैं—

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुच:॥

—18/66

सभी धर्मों को मुझमें त्यागकर तू केवल एक मुझ सर्वशक्तिमान, सर्वाधार परमेश्वर की शरण में आ जा। मैं तुझे संपूर्ण पापों से मुक्त कर दूँगा, तू शोक मत कर। जीवन में बहुत सारे मार्ग हैं, बहुत सारे धर्मों का विवरण है, इसमें कुलधर्म हैं, जातिधर्म हैं, अनेकानेक पथ हैं, अनेकानेक मत हैं।

भगवान कहते हैं कि इनमें उलझने की जरूरत नहीं है; क्योंकि सारे मत, सारे पथ, सारी देवशक्तियाँ, सारी चीजें मेरी तरफ ही आती हैं, इसलिए केवल मुझे पहचान लो। **परित्यज्य**—इन सभी धर्मों को छोड़ दो, इस भार को तुम नहीं ढो सकते, इसे मत ढोओ, इसे त्याग दो।

भगवान कहते हैं कि इसे त्यागने में बाधाएँ तो हैं और बाधाएँ ये तुम्हारी ओर से हैं—कभी आसक्ति की बाधा होती है, कभी अहंता की बाधा होती है और कभी ममता की बाधा होती है। समर्पण से संबोधि की यात्रा संभव तो है, लेकिन असंभव भी है। किसके लिए संभव है और किसके लिए असंभव है? श्रद्धावान के लिए यह संभव है और अहंकारी के लिए यह असंभव है।

(3) तृतीय दिवस—इस दिन भगवद्गीता के 18वें अध्याय के 67वें श्लोक पर विचार-विमर्श हुआ। भगवान कहते हैं—

इदं ते नातपस्काय नाभक्ताय कदाचन।
न चाशुश्रूषवे वाच्यं न च मां योऽभ्यसूयति॥

—18/67

अर्थात तुझे यह गीता रूप रहस्यमय उपदेश किसी भी काल में न तो तपरहित मनुष्य से कहना चाहिए, न भक्तिरहित से और न बिना सुनने की इच्छा वाले से ही कहना चाहिए तथा जो मुझ में दोष-दृष्टि रखता है, उससे तो कभी भी नहीं कहना चाहिए।

भगवान अर्जुन को समझाते हुए कहते हैं कि ये जो गीताशास्त्र हमने तुमसे कहा—ये बड़ा गहन है। ये हमारे-तुम्हारे बीच में जो वार्त्तालाप हुआ है, ये आध्यात्मिक संप्रेषण है, ये गूढ़ है, ये गोपनीय है, इसे अनधिकारी को मत कहना, इसे किसी ऐसे को मत कहना, जो इसका सुपात्र नहीं है। अब इस वर्तमान काल में अर्जुन तो है नहीं, भगवान भी यह बात जानते थे कि यह गीताशास्त्र

शाश्वत है, यह हमेशा रहेगा, इसलिए वे कहते हैं—**इदं ते,** यानी तुम्हें अर्थात भगवान यह बात हम सबसे भी कह रहे हैं कि ये जो गीताशास्त्र है, तुम लोग इसको सँभालकर रखना, जो इसको तत्त्व से समझने की कोशिश कर रहे हैं, उन्हीं से इसकी चर्चा करना।

नातपस्काय—जो तपस्वी नहीं हैं, जिनकी आस्था तपस्या में नहीं है। जिन्होंने तप करके अपना शोधन नहीं किया है, अथवा जो तप की प्रक्रियाओं में लीन रह करके अपना शोधन नहीं कर रहे हैं, उनसे मत कहना और फिर कहते हैं—**न अभक्ताय,** जो भक्त नहीं हैं, जिनकी भावनाओं का मल और मैल नहीं धुला है, जिन्होंने श्रद्धा से समर्पण की यात्रा नहीं की है, जो ईश्वर के प्रेम में नहीं पड़े हैं, **कदाचन**—उनसे यह ज्ञान कभी मत कहना।

केवल आज नहीं, बल्कि कभी भी नहीं, किसी काल में नहीं, किसी युग में भी नहीं कहना। **न चाशुश्रूषवे**—और ऐसे भी लोग होंगे, जो इसे नहीं सुनना चाहते होंगे, जिनकी सुनने की इच्छा नहीं है, जिन्होंने अपने हृदय के द्वार खोले नहीं हैं, जो श्रद्धावान नहीं हैं, जो ग्रहणशील नहीं हैं, उनसे भी मत कहना; क्योंकि उनको समझ में नहीं आएगी ये बात।

ये जो भगवद्गीता शास्त्र है, ये कानों से नहीं सुनी जाती और मुख से नहीं कही जाती। ये हृदय से सुनी जाती है और हृदय से कही जाती है। भगवान आगे कहते हैं कि **न च**—उन्हें भी नहीं, **मां योऽभ्यसूयति**—यानी जो ईश्वर के प्रति द्वेष-दृष्टि व दोष-दृष्टि रखते हैं।

भगवान क्यों कहते हैं—**न चाशुश्रूषवे,** जो मेरी निंदा करते हैं, उन्हें नहीं सुनाओ, क्यों? अहंकार भगवान का, ईश्वर का सबसे बड़ा प्रतिद्वंद्वी है, अहंकार कहता है कि मैं सब कुछ हूँ, लेकिन भगवान चुपके से कह देते हैं कि मैं ही सब कुछ हूँ, तो अहंकार इस बात को सहन नहीं कर पाता, स्वीकार नहीं कर पाता और इसी कारण विवाद, प्रतिरोध व उपद्रव करता है।

(4) चतुर्थ दिवस—इस दिन भगवद्गीता के 18वें अध्याय के 68वें श्लोक की व्याख्या-विवेचना की गई। भगवान कहते हैं कि ये जो मैंने भगवद्गीता कही, ये सामान्य शास्त्र नहीं है, ये गुह्य शास्त्र है, इसे मैंने सामान्य चेतना में नहीं कहा, बल्कि योगस्थ होकर, आत्मस्थ होकर, ध्यानस्थ होकर, समाधिस्थ होकर कहा है, इसलिए भगवान कहते हैं—

य इमं परमं गुह्यं मद्भक्तेष्वभिधास्यति।
भक्तिं मयि परां कृत्वा मामेवैष्यत्यसंशयः॥

—18/68

जो पुरुष मुझमें परम प्रेम करके इस परम रहस्ययुक्त गीताशास्त्र को मेरे भक्तों में कहेगा, वह मुझको ही प्राप्त होगा—इसमें कोई संदेह नहीं है। भगवान कहते हैं कि **य**—जो व्यक्ति यानी ऐसा सुयोग्य व्यक्ति बहुत ही दुर्लभ होता है, जो भगवद्गीता को समझे, इसे जानने की कोशिश करे, फिर कहते हैं कि **इमं परमं गुह्यं**—यह परम गोपनीय शास्त्र है, इस शास्त्र की पुस्तकें तो बाजार में बहुत-सी उपलब्ध हैं, लेकिन इसमें जो अक्षर हैं, शब्द हैं, उनका अर्थ आपको खोजना पड़ेगा।

अर्थ आपको समझना पड़ेगा, अर्थ के लिए आपको पठन के साथ चिंतन में उतरना पड़ेगा, मनन में उतरना पड़ेगा, निदिध्यासन में उतरना पड़ेगा। ये योगस्थ कृष्ण की वाणी है। फिर भगवान कहते हैं—**मद्भक्तेष्वभिधास्यति**—मेरे भक्तों में जो इसे कहेगा। पहली बात तो यह है कि ऐसे भक्त ढूँढ़ना मुश्किल है; क्योंकि श्रद्धा से परिपूर्ण, ग्रहणशील, योग्य पात्र मिलना मुश्किल है।

गीता की पुस्तक आप पढ़ सकते हो, गीता का प्रचार आप कर सकते हो, लेकिन आप गीता को भक्तों के बीच कहो, ये बड़ी कठिन साधना है, ऐसा

व्यक्ति, ऐसा भक्त आप कहाँ से पाओगे, ऐसा शुद्ध हृदय व्यक्ति आपको कहाँ से मिलेगा?

लेकिन ध्यान रखो, यदि आप किसी साधारण व्यक्ति को भगवद्गीता सुनाते हो, तो उसके साथ शब्द चर्चा होगी, लेकिन यदि किसी भक्त के साथ आप भगवद्गीता का पाठ करोगे, तो फिर उसके साथ अर्थ चर्चा होगी, भाव चर्चा होगी, उन प्रसंगों पर चर्चा होगी, जो गहन हैं, गुह्य हैं और गोपनीय हैं। फिर भगवान कहते हैं—**भक्तिं मयि परां कृत्वा,** यदि तुम मेरे भक्तों के साथ इसकी चर्चा करते हो, तो समझो कि ये मेरी पराभक्ति है।

भक्ति और पराभक्ति में क्या फरक है? भक्ति अमृतरूपा है, भक्ति प्रेमरूपा है, लेकिन प्रेम और अमृत तत्त्व जब एक साथ मिल जाएँ, तो समझो कि ये पराभक्ति है। भगवान फिर आगे कहते हैं कि **मामेवैष्यत्य**—मुझमें वास करोगे। (अभी कहाँ वास कर रहे हो, अभी आप वास कर रहे हो, अपनी मानसिक चेतना में।

आदमी दो ही जगह वास करता है, एक शरीर और एक मन। शरीर परिस्थितियों से प्रभावित होता है और मन की मनःस्थिति होती है। मन में जो विचार उभरते हैं, जो चिंतन उभरता है, उससे प्रभावित होता है।) **असंशयाः**—इसमें कोई संशय नहीं है कि तुम मुझमें वास करोगे। वैकुंठ कहीं और नहीं है, जहाँ भगवद्गीता पढ़ी जाती है, वहीं वैकुंठ है।

(5) पंचम दिवस—इस दिन श्रीमद्भगवद्गीता के 18वें अध्याय के 69वें श्लोक पर विचार-मंथन हुआ। भगवान कहते हैं—

न च तस्मान्मनुष्येषु कश्चिन्मे प्रियकृत्तमः।
भविता न च मे तस्मादन्यः प्रियतरो भुवि॥

—18/69

अर्थात उससे बढ़कर मेरा प्रिय कार्य करने वाला मनुष्यों में कोई भी नहीं है तथा पृथ्वी भर में उससे बढ़कर मेरा प्रिय दूसरा कोई भविष्य में होगा भी नहीं।

इस क्रम में भगवान का प्रेमरूप प्रकट हुआ है, तो यहाँ पर भगवान प्रेमपूर्ण हो करके, करुणापूर्ण हो करके कहते हैं कि मैंने अपनी चेतना के शिखर पर, अपनी समस्त योगशक्ति के शिखर पर आरूढ़ हो करके यह संदेश दिया है, यह संदेश केवल अर्जुन के लिए नहीं है।

अर्जुन से वो पहले भी कहते थे कि **निमित्तमात्रं भव सव्यसाचिन्**—अर्जुन! तू निमित्त हो जा। अर्जुन तो एक निमित्त हैं। अतः ये ज्ञान सभी के लिए है, सभी मनुष्यों के लिए है, जीव-जगत् के लिए है और भगवान कहते हैं कि मैंने तो इसे कह दिया, जो मुझे कहना था, वो मैं कह चुका हूँ, क्या इसे कोई समझेगा? क्या इसे कोई समझाएगा? और अगर कोई इसे समझता है, कोई समझाता है, तो समझने वाले और समझाने वाले से अधिक प्रियजन मेरा और कोई भी नहीं है।

(6) षष्ठ दिवस—इस दिन श्रीमद्भगवद्गीता के 18वें अध्याय के जिस 70वें श्लोक की चर्चा की गई, उसमें अध्ययन की महिमा बताई गई है। भगवान कहते हैं—

अध्येष्यते च य इमं धर्म्यं संवादमावयोः।
ज्ञानयज्ञेन तेनाहमिष्टः स्यामिति मे मतिः॥

—18/70

अर्थात जो मनुष्य हम दोनों के इस धर्ममय संवाद का अध्ययन करेगा, उसके द्वारा भी मैं ज्ञानयज्ञ से पूजित होऊँगा—ऐसा मेरा मत है।

इस श्लोक में जो बातें कही गई हैं, वो बहुत गहरी हैं, जैसे—**च य इमं**—जो भी मनुष्य इस गीताशास्त्र को, **अध्येष्यते**—पढ़ेगा, अध्ययन करेगा। पढ़ने में कई चीजें आती हैं, जैसे—पठन, अध्ययन, चिंतन-मनन, निदिध्यासन आदि इसमें आता है।

अभी तक भगवान कह रहे थे कि जो इस गीताशास्त्र की चर्चा करेगा, लेकिन अब कहते हैं कि जो मनुष्य इस गीताशास्त्र को पढ़ेगा; क्योंकि हो सकता है कि आपको कोई भक्त न मिले, तो ऐसी स्थिति में पहले यह गीता अध्ययन आप अपने से आरंभ करें, यह गीता तो आप पढ़ सकते हैं न। इसका पठन, अध्ययन, योग-साधना का आरंभ है। **धर्म्यं**—धर्ममय, धर्म क्या है?

धर्म जीवन और जगत् की गहरी समझ है। इसमें आप गूढ़ता में प्रविष्ट होते हैं। आत्मा और परमात्मा को समझते हैं। **संवाद**—यानी बातचीत, जब हम आपस में बातचीत करते हैं, तो उसको हम वार्त्तालाप कहते हैं।

आपस में बातचीत करते हुए हमारी असहमति बनती है, तो उसे हम विवाद कहते हैं और फिर यदि हमारे बीच में सहमति बन जाती है, जिसमें एक कहता है और दूसरा सुनता है और कहता ही नहीं, समझता भी है तो ये है—संवाद।

संवाद, कथन, श्रवण, संप्रेषण और अनुभूति—ये जो शैली है, ये सब संवाद के अंतर्गत आते हैं। फिर भगवान कहते हैं—**आवयो:** यानी हम दोनों के बीच जो संवाद हुआ है, इसका जो अध्ययन करेगा, **ज्ञानयज्ञेन**—वह ज्ञानयज्ञ संपन्न करेगा। धर्म का सार, धर्म की समूची प्रक्रियाएँ, धर्म की अनुभूति, यज्ञ की प्रक्रिया, यज्ञ की परंपरा—यज्ञ के तत्त्वों में समाहित है।

इसलिए भगवान कहते हैं कि ऐसा व्यक्ति ज्ञानयज्ञ संपन्न करेगा और इस ज्ञानयज्ञ के द्वारा जो मेरी आराधना करेगा, **तेनाहमिष्ट: स्यामिति**—उसके द्वारा मैं पूजित होऊँगा, यह कर्मराशि को दहन करने वाली प्रक्रिया है, इसलिए यह सर्वोपरि पूजा है। **मे मति:**—यह मेरा मत है। भगवान कहते हैं कि यह मैं कह रहा हूँ। कौन? यह बात परमेश्वर कह रहे हैं। ये परमेश्वर का, भगवान का वचन है।

(7) सप्तम दिवस—इस दिन श्रीमद्भगवद्गीता के 18वें अध्याय के 71वें श्लोक पर चिंतन-मनन किया गया। भगवान कहते हैं—

श्रद्धावाननसूयश्च शृणुयादपि यो नरः।
सोऽपि मुक्तः शुभाँल्लोकान्प्राप्नुयात्पुण्यकर्मणाम्॥

—18/71

अर्थात जो मनुष्य श्रद्धायुक्त और दोष-दृष्टि से रहित होकर इस गीताशास्त्र का श्रवण भी करेगा, वह भी पापों से मुक्त होकर उत्तम कर्म करने वालों के श्रेष्ठ लोकों को प्राप्त होगा। गीताशास्त्र का ज्ञान सुनने वाला व्यक्ति कैसा हो? और वह इसे किस तरह से सुने? इस बारे में भगवान कहते हैं कि **यो नर:**—जो व्यक्ति, **शृणुयादपि**—सुनने के लिए तत्पर हैं, लेकिन इसे सुनने वाले व्यक्ति कैसे हों?

अनसूयश्च—जिनमें कोई दोष-दर्शन (दूसरों में बुराइयाँ, गलतियाँ व दोष देखने की प्रवृत्ति) न हो और जो श्रद्धावान हो करके इसे सुने, फिर भगवान कहते हैं—**सोऽपि**, वो व्यक्ति भी, **मुक्त:**—मुक्त हो जाएगा।

अपनी आसक्ति से, अपने अहंकार से, अपने दोष व दुर्गुणताओं से, अपने दुर्गुणों से और यहाँ तक कि कर्मराशि और संस्कारों से और फिर तादात्म्य से भी, चित्त से भी और अंत में प्रकृति से भी वह मुक्त हो जाएगा और अगर इसमें कुछ कमी रह गई, तो? उतनी श्रद्धा प्रगाढ़ न हुई, तो? श्रद्धा गहरी न हो सकी, कहीं पर दोष-दर्शन की वृत्ति बनी हुई है, तो फिर **शुभाँल्लोकान्**—शुभ लोक उसे मिलेंगे। इसलिए अच्छा यही है कि मनुष्य के अंदर वो तीनों योग्यताएँ विकसित हो जाएँ। कौन-सी? **श्रद्धावान्, अनसूयश्च, शृणुयादपि**—यानी सम्यक श्रद्धा, सम्यक दृष्टि, सम्यक श्रवण।

ये जब तीनों योग्यताएँ विकसित होती हैं, तो फिर शब्द अनुभूति बनते हैं और फिर श्रवण,

जीवन को एक नया दृष्टिकोण प्रदान करता है, जो व्यक्ति के लिए उसके मोक्ष के द्वार खोलता है।

(8) अष्टम दिवस—इस दिन श्रीमद्भगवद्गीता के 18वें अध्याय के 72वें श्लोक पर विचार-मंथन हुआ। जो हमारे गुरु होते हैं, वो हमें केवल शब्द नहीं देते हैं, हमें अनुभव भी प्रदान करते हैं। भगवान ने अर्जुन को केवल शब्द नहीं दिए, बल्कि अनुभव भी प्रदान किया और अनुभव प्रदान करते हुए भगवान गीता के इस अंतिम छोर पर आ पहुँचे हैं और अर्जुन से पूछते भी हैं—

कच्चिदेतच्छ्रुतं पार्थ त्वयैकाग्रेण चेतसा।
कच्चिदज्ञानसम्मोहः प्रनष्टस्ते धनञ्जय॥

—18/72

हे पार्थ! मैंने तुमको बहुत सारी बातें बताईं, सुनाईं व समझाईं। क्या तुमने हमारी बातों को ध्यान से सुना? क्या तुम्हारा जो अज्ञानजनित मोह था, क्या वो नष्ट हुआ? हे धनञ्जय! मुझे अपनी बात बताओ। इस श्लोक में कुल मिलाकर के 7 बातें हैं। **कच्चिदेतच्छ्रुतं**—क्या तुमने ठीक से श्रवण किया? सुनने से व्यक्ति जुड़ता है। सुनने से व्यक्ति का मानसिक व भावनात्मक संपर्क होता है।

सुनने से कई बार प्रेम जन्म लेता है, कई बार श्रद्धा जन्म लेती है, कई बार गहन भाव जन्म लेते हैं, जिनको हम सुनते हैं। **पार्थ**—हे पृथानंदन! पृथा के पुत्र। **त्वयैकाग्रेण चेतसा**—क्या तुमने एकाग्रचित्त होकर, गीताशास्त्र सुना है? एकाग्रता दो प्रकार की होती है, एक एकाग्रता बाहर की होती है और एक एकाग्रता अंदर की होती है।

एकाग्रता का जो आरंभ है, वो मानसिक होता है और एकाग्रता का आरंभ धारणा से होता है। एकाग्रता से हम विषयवस्तु को मन में धारण करते हैं, इसलिए उसको धारणा कहते हैं। धारणा में स्वतः ही विचारणा शामिल है, जब और एकाग्रता में बढ़ोत्तरी होती है तो वह ध्यान होता है। ध्यान में भी जब एकाग्रता का परिपाक होता है, तो वह समाधि हो जाती है।

कच्चिदज्ञानसम्मोहः प्रनष्टस्ते धनञ्जय—हे धनंजय! क्या तुम्हारा अज्ञानजनित सम्मोह नष्ट हुआ? क्या तुमने उस प्रकाश को पाया? क्या तुम्हें कुछ अनुभूति हुई? क्या तुम्हारे अंदर की क्षुद्रताएँ समाप्त हुईं, क्या तुम महानता का अनुभव कर रहे हो? होता है कभी-कभी, जब चित्त के आवरण टूटते हैं, तो घटना घट सकती है और व्यक्ति अपने अंदर स्थितप्रज्ञ की स्थिति का अनुभव कर सकता है।

(9) नवम दिवस—इस दिन श्रीमद्भगवद्गीता के 18वें अध्याय के 73वें श्लोक पर विचार-विमर्श किया गया। अर्जुन भगवान के द्वारा पूछे गए प्रश्न के प्रत्युत्तर में कहते हैं—

नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा त्वत्प्रसादान्मयाच्युत।
स्थितोऽस्मि गतसन्देहः करिष्ये वचनं तव॥

—18/73

अर्थात अर्जुन बोले—हे अच्युत! आपकी कृपा से मेरा मोह नष्ट हो गया और मैंने स्मृति प्राप्त कर ली है, अब मैं संशयरहित होकर स्थित हूँ, अतः आपकी आज्ञा का पालन करूँगा। मोह आसानी से नष्ट नहीं होता है।

गोस्वामी जी ने विनय पत्रिका में कहा है—**मोह दशमौलि तदभ्रात अहंकारः**, मोह 10 सिर वाला रावण है और उसका भ्राता कुंभकरण यानी अहंकार है, फिर यह मोह सरलता से नष्ट नहीं होता। ये तो ऐसा रावण है, जिसकी नाभि में अमृतकुंड है, इसलिए ये आसानी से नष्ट नहीं होता।

मोह नष्ट हुआ या मोह नष्ट होना असीम भगवत्कृपा है और अर्जुन भी भगवान से कहते हैं—**त्वत्प्रसादात् नष्टो मोहः**, प्रभु आपकी कृपा से हमारा

मोह नष्ट हो गया। अब मैं सही-सही समझ पा रहा हूँ, सही-सही जान पा रहा हूँ, सही-सही देख पा रहा हूँ। फिर अर्जुन कहते हैं कि **स्मृतिर्लब्धा**—यानी प्रभु! मेरी याद वापस आ गई।

स्मृति के तीन रूप होते हैं—

(1) मन की स्मृति,

(2) चित्त की स्मृति,

(3) शुद्ध चित्त की स्मृति।

जब चित्त ही नहीं था, तब हम क्या थे—तब ईश्वर के, परमेश्वर के हम अभिन्न अंश थे।

ईस्वर अंस जीव अबिनासी।
चेतन अमल सहज सुखरासी॥

ये स्मृति चित्त शुद्ध होने के बाद आती है। अर्जुन कहते हैं कि उन्हें ये सब कुछ भी याद आ गया। यहाँ पर चित्त शुद्ध होना एक विरल घटना है। क्योंकि मन की यात्रा आसान है, लेकिन चित्त की यात्रा आसान नहीं है, इसमें जन्म-जन्मांतर उभरते हैं, सभी जन्म उभरते हैं, लाखोंलाख साल का जो पिटारा चित्त में बंद है, वो खुल जाता है, जब से आप परमेश्वर से अलग हुए हैं, जीव जब से भगवान से अलग हुआ है, जब से जीव ने यात्रा शुरू की है, सारी यात्राएँ जब खुलती हैं, तो उनको सँभाल पाना बहुत कठिन है।

त्वत्प्रसादात्, अगर कोई यह यात्रा पूरी करता है, तो केवल भगवान की कृपा से ही संभव होता है। इसलिए अर्जुन अब कहते हैं कि **स्थितोऽस्मि, त्वत्प्रसादात्**—आपकी कृपा से अब मैं स्थिर हो गया हूँ।

जो परिवर्तन हो रहे हैं अर्जुन में, उनमें पहला परिवर्तन—**नष्टो मोहः,** दूसरा परिवर्तन—**स्मृतिर्लब्धा,** तीसरा परिवर्तन—**स्थितोऽस्मि।** अब मैं स्थिर हो सका प्रभु। श्लोक में अर्जुन आगे कहते हैं—**गतसन्देहः**, यानी अनेकों संशय, अनेकों भ्रम, अनेकों संदेह जो अर्जुन के मन में थे, अब वो बीती बात हो गई।

अर्जुन इन क्षणों में जीवन के केंद्र तक पहुँच गए हैं। अब भगवान कृष्ण की आत्मा का संस्पर्श उन्हें मिला और वे बोल उठे—**करिष्ये वचनं तव** यानी अब मैं आपकी आज्ञा का पालन करूँगा। बोध होने पर ही व्यक्ति को अपने कर्त्तव्य का ज्ञान होता है और वह उसे करने के लिए वचनबद्ध होता है।

उपसंहार—दरअसल तमस् का अंधकार, हठ और अहंता का अँधेरा, ये अमावस की रात है। अर्जुन ने विषाद से बोध की यह यात्रा जब आरंभ की थी, तब उसकी स्थिति अमावस की रात के समान थी, धीरे-धीरे उसके जीवन में अष्टमी का अँधेरा आता है, अष्टमी में रात्रि की स्थिति कुछ इस प्रकार होती है—आधा है चंद्रमा, रात आधी। उसमें आधी रात का अँधेरा दिखता है और आधा चंद्रमा दिखता है, यानी उसका आधा प्रकाश दिखता है।

अमावस की रात—तमस् का अँधेरा है और अष्टमी का अँधेरा रजस् है, यानी जो न पूरी तरह से रात है और न दिन है और बाद में सत्त्वगुण आता है, जैसे—शरद पूर्णिमा की रात आई, यानी संपूर्ण चंद्रमा। अर्जुन ने इस तरह अमावस की रात से पूर्णिमा की रात तक की यात्रा पूरी की। कहाँ-से-कहाँ तक? अमावस के अंधकार से लेकर पूर्णिमा की रात्रि तक।

अब अर्जुन के जीवन में पूर्णिमा की रात्रि आई है। जैसे महात्मा बुद्ध के जीवन में वैशाख पूर्णिमा की रात्रि आ करके उनके जीवन में बुद्ध पूर्णिमा बन गई, वैसे ही अर्जुन अब अपने गंतव्य तक पहुँच गए हैं, अब उनकी यात्रा पूरी हो गई है, अब बस, एक बात है कि इस संसार में परमेश्वर के अलावा और कुछ है नहीं, बस, होश का फरक है, जागरण का फरक है। जागरण होने पर, होश में आने पर जीवन में अमावस की रात पूर्णिमा की रात हो जाती है। ❑

औषधीय-वनस्पतियों में संजीवनी प्रकाश

औषधीय-वनस्पतियों में संजीवनी प्रकाश—प्रकृति का वरदान होगा। असुरों के अँधियारे ने वन-मन एवं जीवन में समान रूप से विष घोला है, तभी तो वन की वनस्पतियों-औषधियों में जीवनदायी तत्त्व मुरझाए हैं। मनुष्य के मन ने आत्मघाती राह पकड़ ली है और जीवन के हास्य में मरण का विषाद-क्रंदन भर गया है।

स्थिति की इस विकट-विकरालता को पहचान कर युगऋषि परमपूज्य गुरुदेव ने दशकों पहले कहा था—"अब एक-एक ठीक करने से काम चलने वाला नहीं है। बढ़ी चली आ रही असुरों की सेना ने इस बार जीवन की जड़ पर प्रहार किया है। उन्होंने वन-मन एवं जीवन में अपने विषदंत गड़ाए हैं। उनके इस विष-दंश से सब कुछ विषमय हो चला है। यह स्थिति आसानी से बदलने वाली नहीं है। समर भयानक है, संघर्ष लंबा चलने वाला है। इस बार जो तप किया जाना है, वह कुछ वर्षों का नहीं, बल्कि कई दशकों का है।"

असुरों का दमन-शमन एवं संहार किया जाना है। इस संघर्ष में महाबली असुर भी चुप रहने वाले नहीं हैं। उनका भी विकराल कोप अनेकों रूपों में उभरेगा। ऐसे में जीवन-सूत्रों एवं जीवनदायी औषधियों को बचाकर रखना है। आने वाले विकट-विकराल समय में तुम लोगों को—गायत्री परिवार के परिजनों को घर-घर, द्वार-द्वार जाकर इन्हें वितरित करना है। इनके प्रयोग व उपयोग को बताना, समझाना है। जीवन जीने के सूत्र एवं जीवनदायी औषधियों का परिचय एवं प्रयोग, दोनों मिलकर वर्तमान युग में संजीवनी विद्या हैं। जीवन-सूत्रों का एकाकी प्रयोग-उपयोग जीवन विद्या है; जबकि औषधियों-वनस्पतियों का प्रयोग-उपयोग चिकित्सा शास्त्र है। इन दोनों की साथ-साथ सिखावन, उपयोग व प्रयोग संजीवनी विद्या है। यह कठिन कार्य प्राचीन युग में प्रलयकाल में किए गए मनु महाराज जैसा है, जब उन्होंने प्रलय के समय सप्त ऋषियों को उनके जीवन-ज्ञानसूत्रों के साथ अन्न और औषधियों के बीजों को अपनी नाव में रक्षित किया था। उस समय उनकी नाव के खेवनहार-तारणहार मत्स्यावतार लेने वाले स्वयं श्रीहरि नारायण बने थे।

बदले हुए समय में गायत्री परिवार ही नाव या बड़ा जहाज है। युगऋषि गुरुदेव के रूप में स्वयं परमात्मा इस नाव के खेवनहार-तारणहार हैं और हम सब मिलकर मनु के वंशज मनुष्यों को जीवन-सूत्रों एवं जीवनदायी औषधीय-वनस्पतियों के रूप में संजीवनी विद्या का महत्त्व व महिमा बतानी है। पिछले कुछ वर्षों में हम सबने प्रलय के दृश्य देख ही लिए हैं। अब अगले कुछ वर्षों में प्रलय के ये सभी दृश्य—अदृश्य होने वाले हैं। परमपूज्य गुरुदेव के तप के प्रकाश में जीवन-सूत्र व जीवनदायी औषधियों को फिर से वही संजीवनी क्षमता प्राप्त होने वाली है और हम सबको मुरझाए हुए जीवन को मुस्काए जीवन में परिवर्तित करने के लिए आगे बढ़ चलना है। सृजन सैनिकों को जो नवसृजन की तैयारी करनी है, उनमें औषधीय-वनस्पतियों की भूमिका अप्रतिम है।

औषधीय-वनस्पतियों का ज्ञान हमारे पूर्वजों से, हमारे ऋषि-महर्षि-ब्रह्मर्षियों से हमें विरासत में मिला है। विश्व में औषधीय पौधों की लगभग 2,500 प्रजातियाँ पाई जाती हैं। इनमें से 1,158

प्रजातियाँ अकेले भारत में हैं। इन औषधियों के प्राचीन प्रयोग व उपयोग का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि इनका उल्लेख वेदों में किया गया है। इनमें से 81 औषधीय पौधों का उल्लेखनीय वर्णन यजुर्वेद में, 341 वनस्पतियों का उल्लेख अथर्ववेद में, 341 का उल्लेख चरक संहिता में और 395 औषधीय-वनस्पतियों का प्रयोग विवरण सुश्रुत संहिता में है। वर्तमान में किए गए अन्वेषण ने हिमालयी रेंज के 800 औषधीय पौधों की गणना की है।

भारत के उच्च हिमालयी और मध्य हिमालयी क्षेत्र में पाई जाने वाली गंद्रायण, कालाजीरा, जंबू, ब्राह्मी, थुनेर, घृतकुमारी, गिलोय, निर्गुंडी, ईसबगोल, दूधी, चित्रक, बहेड़ा, भारंगी, कुटज, इंद्रायण, पिपली, सत्यानाशी, सालपर्णी, दशमूल, श्योनाक, अश्वगंधा, अरणी आदि औषधीय-वनस्पतियाँ अब दुर्लभ होती जा रही हैं। इसका कारण जलवायु-परिवर्तन और वनों से जड़ी-बूटियों का अवैज्ञानिक तरीके से किए जा रहे दोहन को माना जा रहा है। औषधीय-वनस्पतियों की इस वर्तमान स्थिति के बारे में औषधीय-वनस्पतियों के भारतीय एवं विश्व परिदृश्य के विशेषज्ञों का निष्कर्ष है कि धन-लोलुपता के कारण इन औषधीय-पादपों का अत्यधिक दोहन हो रहा है। उपयोग-प्रयोग के लिए औषधि प्राप्त करना कोई बुरी बात नहीं है, लेकिन इसी के साथ नवीन पादपों का रोपण भी तो होना चाहिए।

हिमालयी परिक्षेत्र में आए हुए औषधीय पौधों पर संकट का महत्त्वपूर्ण कारण यहाँ के तापमान में बढ़ोत्तरी भी है। जिस हिमालय में ये जीवनदायी औषधियाँ-वनस्पतियाँ बहुतायत में पाई जाती थीं, वहाँ पर ये अब दुर्लभ हो चुकी हैं। यहाँ तक कि विभिन्न बीमारियों के लिए बनने वाली दवाओं में अब इन औषधियों के स्थान पर इनके विकल्प या सब्सिीट्यूट का उपयोग किया जाने लगा है, तभी आयुर्वेदिक औषधियाँ उतनी कारगर नहीं रह गई हैं। स्थिति को परिवर्तित करने के लिए हमें स्वयं को परिवर्तित करना होगा। हम सबको अपनी संस्कृति व जीवनमूल्यों पर आस्था वापस लानी होगी। हमें वेदज्ञान प्रदान करने वाले महर्षियों ने वनस्पतियों-औषधियों को शिव माना है। शतपथ ब्राह्मण (6.1.3.12) में इसे देखा जा सकता है।

यजुर्वेद अध्याय—16 में **'वृक्षाणां पतये नमः। औषधीनां पतये नमः'** (यजुर्वेद 16.17 से 19) कहकर वृक्ष-वनस्पति, वन, औषधि का स्वामी भगवान शिव को बताया गया है। जिस तरह शिव स्वयं विषपान करके सभी को अमृत प्रदान करते हैं, ठीक उसी तरह से वृक्ष-वनस्पति कार्बन-डाइ-ऑक्साइडरूपी विष पीकर हम सभी को ऑक्सीजन का अमृत प्रदान करते हैं। हमने भगवान शिव को वैद्यनाथ के रूप में पूजित कर उन्हें औषधियों, चिकित्सा एवं चिकित्सकों का स्वामी स्वीकार किया है। बैजनाथ धाम इन्हीं वैद्यनाथ का ही स्वरूप है। इन्हीं भगवान शिव के वरदान से सिद्धयोगों एवं सिद्धमंत्रों से समन्वित ज्ञान को आयुर्वेद कहा गया है—

असुरों की सेना ने इस बार जीवन की जड़ पर प्रहार किया है। उन्होंने वन-मन एवं जीवन में अपने विषदंत गड़ाए हैं। उनके इस विष-दंश से सब कुछ विषमय हो चला है। यह स्थिति आसानी से बदलने वाली नहीं है। समर भयानक है, संघर्ष लंबा चलने वाला है। इस बार जो तप किया जाना है, वह कुछ वर्षों का नहीं, बल्कि कई दशकों का है।

आयुर्वेद प्रवक्ष्यामि सुश्रुताय यमब्रवीत्।
देवो धन्वन्तरिः सारं मृत संजीवनीकरम्॥

—अग्नि पुराण 279/1

अग्नि पुराण के इस वर्णन में कहा गया है कि जिसे आचार्य सुश्रुत ने कहा, जो देवों में श्रेष्ठ धन्वंतरि के वचनों का सार है, वह आयुर्वेद मृत को भी जीवन प्रदान करने वाला संजीवनी सार और संजीवनी शास्त्र है।

अँधियारे के विष में मुरझाने लगी वनौषधियों की यह संजीवनी क्षमता अभी भी समूचे देश में जहाँ-तहाँ दिखाई दे जाती है। डाइमेरिया कार्डेटा जिसे अरुणाचल की निशी भाषा में किच्वेकिनिया कहते हैं—उसका रस शरीर के किसी भाग के कट जाने पर उसके रक्तस्राव को तत्काल रोक देता है। हिमालय के 'थुनेर' कैंसर के लिए अति उपयोगी हैं। अपने देश में पाए जाने वाले 15,000 पुष्पीय पौधों की प्रजातियों में से 3,000 प्रकार की प्रजातियों का औषधीय प्रयोग ज्ञात किया गया है।

कैंसर प्लांट नाम से विख्यात 'क्रोज काउडेस' की सात पत्तियों का रस प्रतिदिन तीन बार लेने से गले में गाँठ व सूजन जैसे लक्षण वाला कैंसर प्रारंभिक अवस्था में ठीक होने की बात विशेषज्ञों ने स्वीकारी है। यह पौधा अरुणाचल से मणिपुर तक बहुतायत में पाया जाता है। अनिद्रा से मुक्ति के लिए निशी समुदाय के लोग अल्पीनिया-आलूघास, जिसका स्थानीय नाम रापिक है, का उपयोग करते हैं। फिलेंथस अमारस—जिसे भूमिआँवला कहते हैं। इसका रस पीलिया में चमत्कारी लाभ देता है।

सिक्किम, दार्जिलिंग, मिरिक आदि स्थानों पर बहुतायत से प्राप्त झाड़ीनुमा पौधा 'डाइक्रोआ-फेब्रीफ्यूजा' की जड़ व पत्तियों को मलेरिया ज्वर की चिकित्सा के लिए उपयोग करते हैं। स्थानीय लोग इसे अपनी भाषा में ग्यिबूकनक के नाम से पुकारते हैं। अपने ही देश के विविध क्षेत्रों में पाई जाने वाली औषधीय-वनस्पतियाँ अनेक हैं, इनके प्रयोग-उपयोग भी अनेक हैं। देश के हर गाँव- शहर में ऐसा कोई स्थान नहीं होगा, जहाँ किसी-न-किसी तरह की औषधि न पाई जाती हो।

इसीलिए परमपूज्य गुरुदेव ने घर-घर में अपनी सुविधानुसार औषधीय वाटिका के रोपण की सलाह दी थी। उन्होंने स्थानीय पौधों के साथ रसोईघर के मसालों के औषधीय-उपयोग के बारे में छोटी-छोटी पुस्तकें भी लिखी थीं। अग्निपुराण आदि ग्रंथों में ऐसे ही विवरण मिलते हैं। इसमें कहा गया है—घर की उत्तरपूर्व दिशा में पाकड़, पूर्व में बरगद, दक्षिण में आम और पश्चिम में पीपल को शुभ माना गया है। घर से थोड़ी दूर दक्षिण दिशा में काँटेदार वृक्ष भी शुभ हैं। शहरों में यह सब तो संभव नहीं है, पर यथासंभव स्थान में और स्थान के अभाव में—गमलों में कँटीले पौधों को छोड़कर सामान्य औषधीय-वनस्पतियों को तो आसानी से उगाया जा सकता है। तुलसी सहित ऐसी सभी औषधियाँ-वनस्पतियाँ निश्चित ही घर-मन एवं जीवन में विषाक्तता के विनाश को संभव कर दिखाएँगी। ❑

परमपूज्य गुरुदेव के तप के प्रकाश में जीवन-सूत्र व जीवनदायी औषधियों को फिर से वही संजीवनी क्षमता प्राप्त होने वाली है और हम सबको मुरझाए हुए जीवन को मुस्काए जीवन में परिवर्तित करने के लिए आगे बढ़ चलना है। सृजन सैनिकों को जो नवसृजन की तैयारी करनी है, उनमें औषधीय-वनस्पतियों की भूमिका अप्रतिम है।

अपनों से अपनी बात

ज्योति अब ज्वाला बनेगी

''पिछले पचास वर्ष से हम दोनों 'दो शरीर-एक प्राण' बनकर नहीं, वरन एक ही सिक्के के दो पहलू बनकर रहे हैं। शरीरों का अंत तो सभी का होता है, पर हम लोग वर्तमान वस्त्रों को उतार देने के उपरांत भी अपनी सत्ता में यथावत् बने रहेंगे और जो कार्य सौंपा गया है, उसे तब तक पूरा करने में लगे रहेंगे, जब तक कि लक्ष्य की प्राप्ति नहीं हो जाती।

युग-परिवर्तन एक लक्ष्य है, जनमानस का परिष्कार और सत्प्रवृत्ति संवर्द्धन उसके दो कार्यक्रम। अगली शताब्दी इक्कीसवीं सदी अपने गर्भ में उन महती संभावनाओं को सँजोए हुए है, जिनके आधार पर मानवीय गरिमा को पुनर्जीवित करने की बात सोची जा सकती है। दूसरे शब्दों में इसे वर्तमान विभीषकाओं का आत्यंतिक समापन करने वाला सार्वभौम कायाकल्प भी कह सकते हैं। इस प्रयोजन के लिए हम दोनों की साधना स्वयंभू मनु और शतरूपा जैसी, वसिष्ठ-अरुंधती स्तर की चलती रही है और यथावत् चलती रहेगी।''

—'ज्योति फिर भी बुझेगी नहीं', अखण्ड ज्योति, पृ.—29-30, जनवरी—1988

अखण्ड ज्योति के दैवी ऊर्जा से अनुप्राणित पृष्ठों पर आज से 36 वर्ष पूर्व जब ये शब्द पूज्य गुरुदेव की कलम से क्रांतिरूप में प्रवाहित हुए तो वो समय उनकी सूक्ष्मीकरण-साधना का समय था। साधना चरम पर थी, लेखनी ज्वाला का रूप ले चुकी थी, गायत्री परिवार मत्स्यावतार के रूप में विश्व-वसुधा को अपने अंक में समेटने के लिए व्यग्र नजर आ रहा था और इन्हीं उल्लेखनीय घटनाक्रमों के मध्य में शनैः-शनैः पूज्य गुरुदेव अपनी भौतिक शरीर की यात्रा को समेटते हुए भी नजर आ रहे थे।

वो अपनी लौकिक यात्रा समेट लेंगे, ऐसी अनुभूति गायत्री परिजनों को न चाहते हुए भी हो ही रही थी और जो उस सत्य से परिचित होते हुए भी अपरिचित थे, उनके लिए परमपूज्य गुरुदेव ने इसी लेख में आगे लिखा भी कि '**शरीर-परिवर्तन की वेला आते ही यों तो हमें साकार से निराकार होना पड़ेगा, पर क्षण भर में उस स्थिति से अपने को उबार लेंगे और दृश्यमान प्रतीक के रूप में उसी अखंड दीपक की ज्वलंत ज्योति में समा जाएँगे, जिसके आधार पर अखण्ड ज्योति नाम से संबोधन अपनाया गया है। शरीरों के निष्प्राण होने के उपरांत जो चर्मचक्षुओं से हमें देखना चाहेंगे, वे इसी अखण्ड ज्योति की जलती लौ में हमें देख सकेंगे।**'

शब्दों के पीछे के संदेश को समझ पाने की सामर्थ्य जिनके भीतर है, वे पूज्य गुरुदेव के इंगित का अनुमान लगा सकते हैं कि अखंड दीपक की अखण्ड ज्योति, जो वातावरण को विषाक्तता से त्रस्त इस वसुंधरा पर दैवी शक्तियों एवं ऋषि चेतना की उपस्थिति का प्रत्यक्ष प्रमाण मानी जा सकती है—वह स्वयं गुरुसत्ता की उपस्थिति का साक्षात् प्रतीक है।

यह मात्र एक संयोग नहीं है कि 15 वर्ष की आयु में प्रकाश पुंज के रूप में जब गुरुवर को

उनकी अलौकिक मार्गदर्शक सत्ता के दर्शन हुए तो उन्होंने उन्हें अखंड घृत-दीप की स्थापना एवं उसी अखंड दीप के प्रत्यक्ष सान्निध्य में महापुरश्चरणों की शृंखला को संपन्न करने का निर्देश प्रदान किया।

दूसरे लोग गुरुओं को ढूँढ़ने निकलते हैं, पर पूज्य गुरुदेव जैसे सुपात्र को ढूँढ़ते हुए उनके गुरु ही उनके पास पहुँचे थे। जिसे पूज्य गुरुदेव ने 'सौभाग्य का सूर्योदय' कहकर पुकारा, वह वस्तुस्थिति में हम सबके सौभाग्य का सूर्योदय था, युगनिर्माण योजना के अविस्मरणीय विस्तार का बीजारोपण था और ये सब घटा जिस अखंड दीपक के सान्निध्य में था—उस अखंड दीपक के प्राकट्य की शताब्दी को वर्ष-2026 में गायत्री परिवार मनाने जा रहा है। गणना करने वालों के लिए सौभाग्यों की शृंखला में यह एक ऐसा सौभाग्य होगा, जिसका साक्षी बन पाने का अवसर सहस्रों जन्मों के पुण्योदय पर ही मिलता है—पहले नहीं।

सन्-2026 में परमपूज्य गुरुदेव की तप-साधना के एवं परमवंदनीया माताजी के धरा-धाम पर अवतरण के सौ वर्ष पूर्ण होने जा रहे हैं। विगत सौ वर्ष गायत्री परिवार की अलौकिक यात्रा के इतिहास में कुछ ऐसे रहे हैं, जिनके विषय में लिखते हुए स्याही चुक जाएगी, पर पृष्ठ तब भी कम पड़ने वाले हैं। आँवलखेड़ा की पूजा की कोठरी से प्रारंभ हुई यात्रा देखते-देखते एक विश्वव्यापी आध्यात्मिक आंदोलन में परिवर्तित हो गई। बीज देखते-देखते विशाल वृक्ष में बदल गया। ईंटों ने इमारत का, शब्दों ने शास्त्र का और पुकार ने गूँज का रूप इस अवधि में ले लिया।

अब समय विस्तार को समग्रता देने का है। इमारत खड़ी हो जाने के बाद शिल्पकार यह देखता है कि कहीं सीमेंट लगना शेष तो नहीं रह गया, कोई कोना बिना रंग-रोगन के, पेंट के नजर आता है तो उसे रँगने-भरने का काम समग्रता देने की दृष्टि से किया जाता है। बस, कुछ ऐसी ही जिम्मेदारी अब हमारे कंधों पर आई है। पूज्य गुरुदेव एवं वंदनीया माताजी की योजना की परिधि में मात्र हरिद्वार नहीं, वरन संपूर्ण विश्व आता है—इसीलिए पूज्य गुरुदेव द्वारा प्रदत्त योजना का नाम युग निर्माण योजना है, हरिद्वार, उत्तराखंड या भारत निर्माण योजना नहीं।

ये कार्य हमारी जिम्मेदारी में आया है कि जहाँ-जहाँ तक पूज्य गुरुदेव-वंदनीया माताजी के विचारों की गूँज पहुँचनी शेष रह गई है—वहाँ-वहाँ तक उसे पहुँचाने वाले हम बन जाएँ—ठीक वैसे ही, जैसे इमारत को अंतिम स्वरूप, 'फाइनल टच' देने वाला शिल्पकार यह सुनिश्चित करता है कि कहीं कोई कोना बिना रंग-रोगन के, बिना सीमेंट के रह तो नहीं गया।

परमवंदनीया माताजी और अखंड दीपक दो विभिन्न चेतनाओं के नाम नहीं हैं, वरन एक ही चेतना का नाम है। याद रखने वालों को याद होगा कि सन्-1971 में परमपूज्य गुरुदेव मथुरा से विदाई संदेश देकर अखंड दीपक को परमवंदनीया माताजी के दिव्य संरक्षण में सुरक्षित रखकर हिमालय यात्रा पर निकले थे। उसका अर्थ ही यह था कि दोनों चेतनाएँ अभिन्न हैं।

हर गायत्री परिजन को यह स्मरण रख लेना चाहिए कि पूज्य गुरुदेव की तप-साधना के सौ वर्ष, अखंड दीपक के प्राकट्य के सौ वर्ष एवं परमवंदनीया माताजी के अवतरण के सौ वर्ष—ये तीन विभिन्न घटनाक्रम दिखते हुए भी ठीक वैसे ही एक हैं, जैसे गंगा-यमुना और सरस्वती की त्रिवेणी, प्रयाग में एक धारा हो जाती हैं।

इस दृष्टि से वर्ष—2026 हर गायत्री परिजन के लिए एक आवाहन लेकर उपस्थित हुआ है और वो यह कि हम गुरुसत्ता के पावन प्रकाश को घर-घर तक पहुँचा सकें। जब पूज्य गुरुदेव ने अखण्ड ज्योति को लिखना आरंभ किया था तो अनेकों गणमान्यों ने उनको निरुत्साहित करने का कार्य किया और यह कहना आरंभ किया कि कैसे ये आर्थिक दृष्टि से आत्मघात के समान है।

उन्हें प्रत्युत्तर देने के स्थान पर पूज्य गुरुदेव ने अखण्ड ज्योति में ही लिखा कि 'यह ज्योति अगर इनसान की जलाई हुई होगी तो बुझ जाए और यदि यह ईश्वर की जलाई हुई होगी तो अखंड जलेगी।' सत्य ये ही है। उनकी जलाई हुई ज्योति न केवल जलती रहेगी, बल्कि और प्रचंड होगी।

पूज्य गुरुदेव ने सन्-1988 की जनवरी की अखण्ड ज्योति में लिखा भी था कि 'हमारी ज्योति और फैलेगी। मिशन तीर की तरह सनसनाता हुआ अपने लक्ष्य की ओर बढ़ेगा।' कहने का अभिप्राय स्पष्ट है कि हमारा दायित्व अखण्ड ज्योति को और प्रचंड बनाने का है। यह सौभाग्यशाली समय हर गायत्री परिजन के लिए एक ही पुकार लेकर उपस्थित हुआ है कि वे युगसृजेताओं की पंक्ति में अपना नाम सबसे आगे लिखा सकें।

सौभाग्य का प्रवाह उमड़ रहा है, क्रांति की ज्वाला जाज्वल्यमान है, पुकारा भावनाशीलों को गया है, जिन्हें महाकाल की पुकार सुनाई पड़ती हो, वो चुप न बैठें, आगे आएँ और समाज को अभिनव दिशा दिखाने का प्रयत्न करें। अखण्ड ज्योति की प्रचंड ज्वाला क्रांतिदूतों को पुकार रही है कि वो उस मशाल को हाथ देने वाले बन सकें, जिसे स्पर्श करने का सौभाग्य भी सौभाग्यशालियों को ही मिलता है। ❑

औरंगजेब मुगल सल्तनत का क्रूरतम बादशाह था। सत्ता हथियाने की चाह में उसने सर्वप्रथम अपने दोनों भाइयों शुजा और मुराद को मौत के घाट उतरवा दिया और फिर अपने बड़े भाई दाराशिकोह को गिरफ्तार कर लिया।

पहले तो उसने दारा को अमानवीय यातनाएँ दीं और फिर उसके लहूलुहान बदन को हाथी की पीठ पर डालकर शहर में मजमा दिखाने के लिए छोड़ दिया। यह दृश्य देखने के लिए बाजार में भारी भीड़ एकत्रित हो गई।

दारा नीची नजरें किए लेटा था कि उसे एक आवाज सुनाई पड़ी—"दारा! तू जब भी यहाँ से गुजरता था तो खैरात बाँटता हुआ जाता था। आज क्या इस गरीब को तेरी सखावत का मौका न मिल सकेगा।"

दाराशिकोह ने नजरें उठाईं तो उसे एक फकीर खड़ा दिखाई पड़ा। दारा ने अपने कंधे पर पड़े दुशाले को उठाया और फकीर की गोद में डाल दिया। सारा शहर 'दारा जिंदाबाद' और 'औरंगजेब मुरदाबाद' के नारों से गुँजायमान हो उठा।

अपनों से अपनी बात

अविस्मरणीय, अद्भुत एवं अलौकिक कार्यक्रमों की शृंखला

परमपूज्य गुरुदेव की शतवर्षीय तप-साधना की ये घड़ी, अखण्ड ज्योति को प्रचंड ज्वाला में बदलने की ये घड़ी उमंगों की, प्रेरणाओं की, प्रकाश के अवतरण की घड़ी है।

पूज्य गुरुदेव ने कहा था कि अखंड दीपक के प्राकट्य के साथ उनके जीवन में सौभाग्य की तरंग आई। 12 फरवरी, 1978 के अपने क्रांतिकारी उद्‌बोधन में पूज्य गुरुदेव ने कहा कि 'मैं चाहता हूँ कि जो सौभाग्य की धारा और लहर मेरे पास आई थी, काश! आपके पास भी आ जाती तो आप धन्य हो जाते। जब आती है हूक, जब आती है उमंग तो फिर क्या हो जाता है ? रोकना मुश्किल हो जाता है और जो आग उठती है, ऐसी तेजी से उठती है कि इंतजार नहीं करना पड़ता। जब वक्त आता है तो आँधी-तूफान के तरीके से आता है।'

वर्ष—2026 की यह घड़ी वैसे ही आँधी-तूफान के तरीके से हर गायत्री परिजन के जीवन में आई है। वर्ष—2026 को ध्यान में रखकर विगत 2 वर्षों से ज्योति कलश यात्राएँ भारत के समस्त राज्यों से लेकर भारत से बाहर भी सिंगापुर, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका इत्यादि विभिन्न देशों में प्रेरणादायी पुरुषार्थ के साथ संपन्न हो रही हैं।

जनजागरण की इस परीक्षा को पूर्ण कर लेने के उपरांत दूसरे महत्त्वपूर्ण चरण में प्रवेश का क्रम संपन्न किया जाता है। यह मात्र एक संयोग नहीं है कि पूज्य गुरुदेव की शतवर्षीय तप-साधना का प्रारंभ अखंड घृत-दीप की पावन उपस्थिति में प्रकट हुआ। उनकी मार्गदर्शक सत्ता द्वारा उनको गायत्री महाशक्ति के चौबीस वर्ष के चौबीस महापुरश्चरण एवं चौबीस वर्ष में तथा उसके बाद समय-समय पर क्रमबद्ध मार्गदर्शन के लिए हिमालय यात्रा का निर्देश प्रदान किया।

गायत्री मंत्र के 24 अक्षर, गायत्री माता की 24 शक्तिधाराएँ, विश्वविख्यात हैं। विश्वामित्र तंत्र में कहा गया है कि

चतुर्विंशति साहस्त्रं महाप्रज्ञा मुखं मतम्।
चतुर्विंशक्ति शवे चैतु ज्ञेयं मुख्यं मुनीषिभिः॥

अर्थात महाप्रज्ञा के 24,000 प्रधान नाम हैं और उनमें से भी 24 को अधिक महत्त्व का माना गया है। माँ गायत्री के 24 अक्षरों की, 24 शक्तिधाराओं यथा आदिशक्ति, ब्राह्मी, वैष्णवी, शांभवी, वेदमाता, देवमाता, विश्वमाता, ऋतंभरा, मंदाकिनी, अजपा, ऋद्धि-सिद्धि जैसी वैदिकी एवं सावित्री, सरस्वती, लक्ष्मी, दुर्गा, कुंडलिनी, प्राणग्नि, भवानी, भुवनेश्वरी, अन्नपूर्णा, महामाया, पयस्विनी और त्रिपुरा जैसी तांत्रिकी शक्तिधाराओं के 24 गायत्री महापुरश्चरण जब पूज्य गुरुदेव ने संपादित किए तो उन्हीं शक्तिधाराओं को ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान में शक्तिपुंज के रूप में प्रतिष्ठित किया।

न यह संयोग था कि गायत्री मंत्र के 24 अक्षर, पूज्य गुरुदेव की साधना के 24 महापुरश्चरणों का आधार बने और न यह संयोग है कि वर्ष—2026 के बाद इस सदी के पूर्वार्द्ध में ठीक 24 ही वर्ष शेष हैं। सन्, 1926 से वर्ष-2050 के 24 वर्षों ने विश्व की भौगोलिक रूपरेखा को परिवर्तित करने का कार्य किया था तो यह कहना भी अतिशयोक्ति न

होगा कि वर्ष—2026 से वर्ष—2050 के 24 वर्ष विश्व की आध्यात्मिक रूपरेखा को लिखने का आधार बनने वाले हैं।

कहने का अर्थ स्पष्ट है कि अखण्ड ज्योति को प्रचंड ज्वाला में परिवर्तित करने के लिए 24 वर्षीय सामूहिक तपोनुष्ठान का संकल्प अनिवार्य हो गया है।

वर्तमान युग में संघशक्ति का ही बाहुल्य है। अन्य युगों में शरीरबल, धनबल, जनबल, मनोबल आदि से भी आवश्यक लक्ष्य का संधान हो जाता था, परंतु इस युग में संघशक्ति ही वह साधन है, जिसके द्वारा सामूहिक उद्देश्यों को पूर्ण किया जाना संभव है।

वैदिक काल में देवासुर संग्राम में परास्त होने पर ब्रह्मा जी ने सब देवताओं की संघशक्ति के रूप में माँ दुर्गा को उत्पन्न किया था तो रावण के समय में असुरता का शमन करने के लिए ऋषियों के रक्तघट से माँ सीता का जन्म हुआ था।

वर्तमान समय की विषाक्तता का शमन भी एक ऐसे ही 24वर्षीय संघशक्ति के आध्यात्मिक प्रयोग से संभव है और इस हेतु यह आवश्यक समझा जा रहा है कि जिस तरह से माँ गायत्री के पंचमुख, पंचकोश, गायत्री-साधना का मूलाधार हैं, उसी तरह से वर्ष—2026 से लेकर आगामी 4 वर्षों में भारत के चार कोनों—उत्तर में शांतिकुंज, हरिद्वार की पावन भूमि में, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम में घोषित चार स्थानों पर तपोनुष्ठान को संपन्न करने के बाद भारत के हृदयांचल, दिल्ली में एक कार्यक्रम पंचम पुरुषार्थ के रूप में संपन्न हो।

इन कार्यक्रमों को 24वर्षीय तप-अभियान का प्रारंभ माना जाए समाप्ति नहीं। भारत के इन चार कोनों पर किए जाने वाले कार्यक्रमों का आधार दिव्यता होगा, भव्यता नहीं। परमपूज्य गुरुदेव ने कहा था—'देव संस्कृति के निर्माता यज्ञ पिता-गायत्री माता।' इन्हीं दो को आधार बनाकर—गायत्री-उपासना एवं गायत्री यज्ञ को आधार बना कर इस अलौकिक पुरुषार्थ को संपन्न करने का भाव सभी के मन में उमड़ा है।

भारत के चार कोनों पर होने वाले प्रत्येक कार्यक्रम में 24,000 गायत्रीसाधकों की एकमासीय या 40 दिवसीय तप-साधना की पूर्णाहुति संपन्न हो, ऐसा सोचा गया है। गायत्री-साधना; पूज्य गुरुदेव द्वारा निर्दिष्ट साधनात्मक अनुशासनों के साथ ही संपन्न हो। ब्रह्मचर्य इस अवधि में आवश्यक है। उपवास जिनके लिए जितना संभव हो, उतना करें। बालक, वृद्ध या दुर्बल प्रकृति के व्यक्ति—फलाहार या अस्वाद भोजन का प्रयोग कर सकते हैं। चमड़े की वस्तुओं का पूर्णरूपेण त्याग आवश्यक है।

इस अवधि में साधनात्मक कार्यों हेतु इसी उद्देश्य के लिए, इसी भावना से निर्मित इन वस्तुओं का उपयोग किया जाए (माला, आसन, हवन सामग्री आदि), जिन्हें शांतिकुंज हरिद्वार के स्वावलंबन केंद्र में अहर्निश गायत्री मंत्र की ध्वनि के उच्चारण में निर्मित किया गया है। अनुष्ठान की अवधि में अपने शरीर के लिए दूसरों की सेवा कम-से-कम ली जाए तो उत्तम रहता है।

जो लोग अध्यात्मवाद की महत्ता को स्वीकार करते हैं, पूज्य गुरुदेव एवं वंदनीया माताजी के विचारों को जन-जन तक पहुँचाने के लिए जिनके हृदय में स्वतः संकल्प उभरता है—मात्र ऐसे ही साधकों को यह संकल्प लेना चाहिए और दिखावे के लिए नहीं, वरन आत्मिक पुरुषार्थ के लिए 40 दिवसीय अनुष्ठान को पूर्ण करके उसकी आहुति इन 4 में से किसी एक, उनके निकटवर्ती स्थान पर करनी चाहिए। मात्र शांतिकुंज, हरिद्वार में गायत्री तीर्थ होने के कारण 2,40,000 साधकों की आहुति

का क्रम रखा गया है—शेष तीनों स्थानों पर 24,000 साधकों की आहुतियाँ दिए जाने का क्रम रखा गया है।

गायत्री-उपासना भारतीय संस्कृति का मूलाधार है तो वहीं यज्ञ को भारतीय संस्कृति का मेरुदंड कहकर के पुकारा गया है। शास्त्रों में भगवान का एक नाम यज्ञपुरुष कहा गया है तो शतपथ ब्राह्मण की उक्ति—**यज्ञो वै विष्णुः** का अर्थ ही इसी रूप में लिया जाता रहा है। प्रसिद्ध तार्किक कृति न्याय के वात्स्यायन भाष्य में **यज्ञस्य मन्त्रः वेदस्य विषयः** (4/1/62) कहने का अर्थ भी ये ही है कि सामान्य जीवन के हर महत्त्वपूर्ण कृत्य का आधार यज्ञ माना गया है।

जिस तरह से पाँच आहुतियों से, पंच बलियों से दैनिक बलिवैश्य की शुरुआत होती है, वैसे ही इन चार स्थानों पर गायत्रीसाधकों की गायत्री-उपासना का अंश जुड़ने के साथ इस 24वर्षीय तपोनुष्ठान की शुरुआत हो रही है। देशव्यापी गायत्री उपासकों, साधकों को एक सूत्र-शृंखला में आबद्ध करके उनके मणिमुक्तकों को परमपूज्य गुरुदेव एवं वंदनीया माताजी को समर्पित किया जाए तो इससे बढ़कर उपहार उनकी जन्मशताब्दी पर दूसरा नहीं हो सकता।

चार स्थानों पर यज्ञीय अनुष्ठान के माध्यम से जो उन साधकों के द्वारा संपन्न होगा, जिन्होंने इस हेतु संकल्प-पत्रकों को भरा होगा, उनके संपन्न होने के साथ ही इन्हीं साधकों में से 24,000 ऐसे समाज निर्माणी ऋत्वजों का कार्यक्रम भारत के केंद्र में करना प्रस्तावित है—जो पूज्य गुरुदेव एवं वंदनीया माताजी के विचारों के प्रसार हेतु भ्रमण, परिश्रम, भावना-संचार जैसे कठिन भार को अपने कंधे पर उठाने के लिए तैयार हों।

उनके जिम्मे—

(1) अपने निकटवर्ती केंद्रों में जाकर बिना किसी अपेक्षा के, मूक साधक की तरह से बनाने की भावना-व्यवस्था को गुरुसत्ता के आदेशानुसार तैयार करना।

(2) नए सदस्य, शाखाएँ, केंद्र बनाने के लिए प्रयत्न करना।

(3) अपनी गतिविधियों की नियमित जानकारी शांतिकुंज को भेजते रहना एवं

(4) अखण्ड ज्योति स्वयं पढ़कर तथा दूसरों को पढ़ाकर, विचारों को जन-जन तक पहुँचाने का प्रयत्न करना है।

पंचबलियों रूपी इस बलिवैश्य से जो महानुष्ठान प्रारंभ होगा, उसका उद्देश्य चौबीस वर्षीय तपोशक्ति ऊर्जा को जन्म देना है। उस हेतु 2026 से प्रारंभ होकर 2050 तक 108 स्थानों पर, मात्र भारत ही नहीं, वरन विश्व के प्रत्येक कोने में—ऐसे कार्यक्रमों को आयोजित करना प्रस्तावित है, जो उस क्षेत्र के जागरण का आधार बन सकें।

उस स्थान की क्षमता, सामर्थ्य को देखते हुए वहाँ भाग लेने वाले साधकों की संख्या 240, 2,400 से लेकर 24,000 तक हो सकती है, परंतु ध्यान ये ही रहे कि संकल्प नियमपूर्वक पूर्णता के भाव से लिए जाएँ, दिखावे या प्रदर्शन के लिए नहीं। इन स्थानों पर युग चेतना को साधक बनाने के संकल्प को अतिरिक्त परिचय सत्र, प्रेम-आत्मीयता गतिविधि, प्रगति-प्रस्ताव पर समीक्षा बैठकों जैसे वे सभी कार्य करने आवश्यक हो जाते हैं—जिनके विषय में पूर्व में भी लिखा या बोला गया है।

इस तीन दैवी उपक्रमों—अखंड दीपक के प्राकट्य, परमवंदनीया माताजी के अवतरण एवं पूज्य गुरुदेव की तप-साधना के सौ वर्ष पूर्ण होने की सौभाग्यशाली घड़ी में हमारी श्रद्धांजलि इसी रूप में चढ़े, जिस रूप में गुरुसत्ता को हमसे अपेक्षा

थी। साधना के आधार पर ही यज्ञाग्नि के प्रवाह में प्रचंडता आती है और वो ही प्रयास यहाँ किया जा रहा है। अपने प्रारंभिक वर्षों में अखण्ड ज्योति 500 प्रतियों के रूप में छपती थी, बढ़ते-बढ़ते वह संख्या लाखों में पहुँची।

जितना कार्य हुआ उस पर गर्व तो किया जा सकता है, पर पर्याप्त नहीं माना जा सकता है। 145 करोड़ की जनसंख्या तो मात्र भारत की ही है और अभी गायत्री परिवार की सदस्य संख्या को देखते हुए यह कहना गलत न होगा कि एक बड़ा क्षेत्र अभी भी पूज्य गुरुदेव एवं वंदनीया माताजी के विचारों को सुनने-पढ़ने-जानने की प्रतीक्षा कर रहा है और इन आध्यात्मिक आयोजनों का मूल उद्देश्य भी ये ही है कि हरेक छूटे को छुआ जाए, हरेक टूटे को जोड़ा जाए, हर जुड़े हुए को जगाया जाए, हर जागते हुए को दौड़ाया जाए और हर दौड़ते हुए को लक्ष्य तक पहुँचाया जाए। दुंदुभि बज रही है, स्वरों को शक्ति मिलने लगी है, आइए तप की नींव पर रूपांतरण की भूमिका लिखना आरंभ करें। ❑

भगवान बुद्ध जेतवन में ठहरे हुए थे। हर सुबह वो भिक्षावृत्ति को निकलते तो उन्हें मार्ग में एक किसान अपने खेत में काम करता मिलता।

अपने कार्य के प्रति उसकी निष्ठा देखकर बुद्ध के मन में उसके लिए करुणा उमड़ी। वे प्रतिदिन वहाँ रुककर उस किसान को कुछ उपदेश देने लगे।

जब उस किसान की फसल तैयार हुई तो उसने संकल्प किया कि वो अपनी फसल का एक हिस्सा भगवान बुद्ध को और भिक्षुसंघ को भेंट करेगा।

दुर्योगवश उसी रात मूसलाधार वर्षा हुई और उसकी सारी फसल चौपट हो गई। अगले दिन जब भगवान बुद्ध वहाँ से गुजरे तो उन्होंने किसान को वहाँ रोता हुआ पाया। पूछने पर किसान उनको सारी घटना सुनाकर बोला— "प्रभु! मुझे दुःख अपने नुकसान का नहीं, वरन इस बात का है कि मैं आपकी सेवा का यह अवसर चूक गया।"

बुद्ध मुस्कराए और बोले—"भंते! मूल्य वस्तुओं का नहीं, भावनाओं का है। तुम्हारे हृदय में उमड़ी भावनाएँ तो मुझ तक कल ही पहुँच गई थीं। इसके कारण तुम उससे ज्यादा पुण्य के भागी बने हो, जितना तुम उस फसल को समर्पित करके बनते। मेरा आशीर्वाद सदा तुम्हारे साथ है।"

महाकाल

व्यथित पीड़ित आर्तजन का है सहारा वही शिव है।
प्रस्फुटित है शिखर से सद्ज्ञान धारा वही शिव है॥

भस्म तन की खाक होना देह को नश्वर बताए।
लख दिगंबर रूप जिनका सादगी मन में समाये।
नारियाँ शक्तिस्वरूप सुप्त गौरव को जगाने।
अर्द्धनारीश्वर जिन्होंने रूप धरा वही शिव है।
प्रस्फुटित है शिखर से सद्ज्ञान धारा वही शिव है॥

वृषभ उनका अथक श्रम की प्रेरणा मन में जगाए।
वृत्त उनका विषधरों का हलाहल शीतल बनाए।
भाव दें सद्भाव को ही देह का हो वर्ण कैसा।
चंद्रमा-सा कुटिल उसको शीश धारा वही शिव है।
प्रस्फुटित है शिखर से सद्ज्ञान धारा वही शिव है॥

वृषभ सिंह व नाग मूषक भावयुत जिस कुल में रहते।
सुसंस्कृत सुत गजानन को देवगण भी पूज्य कहते।
भोग-विषयों से विरत हो त्याग-तप से दीप्त जीवन।
लोकहित में पी हलाहल कंठ धारा वही शिव है।
प्रस्फुटित है शिखर से सद्ज्ञान धारा वही शिव है॥

योग से ही कामना की वह्नि को जिनने बुझाया।
दूरद्रष्टा, सद्विवेकी तीसरे दृग ने बनाया।
महाकाल हे प्रलयंकारी सृष्टि के संहारकर्त्ता।
भू-भार हरने भस्मासुर जिनने संहारा वही शिव है।
प्रस्फुटित है शिखर से सद्ज्ञान धारा वही शिव है॥

अन्याय अत्याचार शोषण फैलता ही जा रहा हो।
अप-संस्कृति का दुष्ट दानव देवियों को खा रहा हो।
बस, तभी संकल्प ले दृढ़ असुरता उच्छिन्न करने।
तांडव कर निज करों में त्रिशूल धारा वही शिव है।
प्रस्फुटित है शिखर से सद्ज्ञान धारा वही शिव है॥

—चक्रेश कुमार

▶'नारी सशक्तीकरण' वर्ष◀

युगद्रष्टा वेदमूर्ति तपोनिष्ठ

पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य

के

समग्र वाङ्मय का क्रमिक परिचय

खंड – 2

जीवन देवता की साधना–आराधना

मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता स्वयं है। जीवन-साधना का दर्शन यदि ठीक तरह से समझ में आ जाए व सही प्रयोग का अभ्यास बन जाए तो मनुष्य अनेकानेक उपलब्धियाँ सहज ही इसी जीवन में पा सकता है।

इस खंड में आप पाएँगे

- जीवन-देवता की साधना।
- प्रयोग और सिद्धियाँ।
- साधना के स्वर्णिम सूत्र।
- सिद्धि एवं उपलब्धि।
- आत्मोत्कर्ष के आधार।
- शक्ति-संचय का रूप।
- लोक-आराधना का परिणाम।

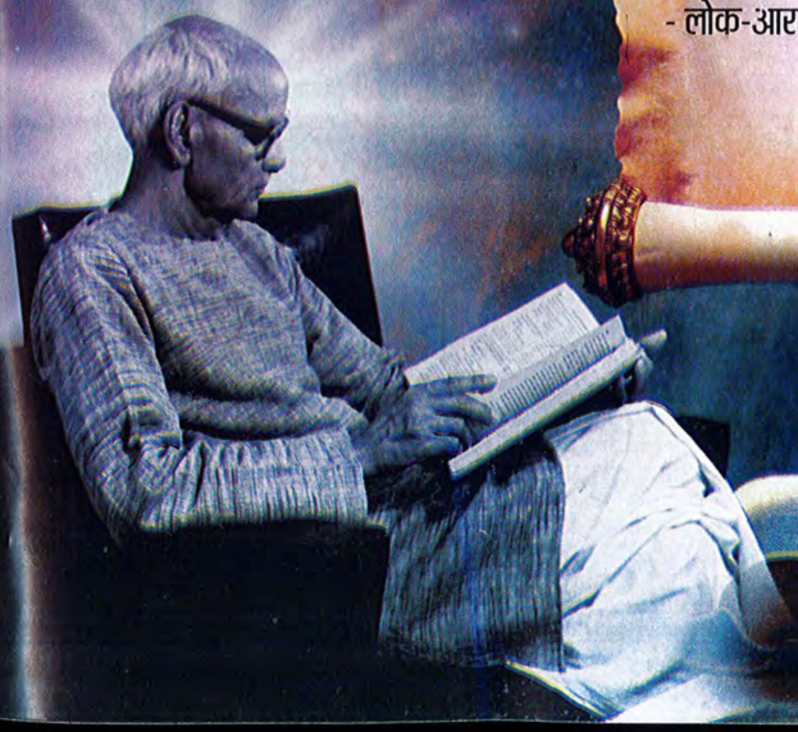

अखण्ड ज्योति
(मासिक)
R.N.I. No. 2162/52

www.awgp.org

प्र. ति. 01 / 01 / 2025
Regd. No. Mathura - 025/2024-2026
Licensed to Post without Prepayment
No. : Agra/WPP - 08/2024-2026

देव डोली समागम
देव संस्कृति विश्वविद्यालय में अद्भुत सांस्कृतिक समागम
उत्तराखंड की लोक संस्कृति एवं लोक परंपराओं का एक विशेष कार्यक्रम

उत्तराखंड संस्कृत विश्वविद्यालय में माननीय राज्यपाल (उत्तराखंड) द्वारा
प्रतिकुलपति (देव संस्कृति विश्वविद्यालय) को डी.लिट् की मानद उपाधि द्वारा सम्मानित किया गया

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक—मृत्युंजय शर्मा द्वारा जनजागरण प्रेस, बिरला मंदिर के सामने, जयसिंहपुरा, मथुरा से मुद्रित व अखण्ड ज्योति संस्थान, बिरला मंदिर के सामने, मथुरा-वृंदावन रोड जयसिंहपुरा, मथुरा-281003 से प्रकाशित। संपादक—डॉ. प्रणव पण्ड्या।
दूरभाष — 0565- 2403940, 2972449, 2412272, 2412273 मोबाइल — 09927086291, 07534812036, 07534812037, 07534812038, 07534812039
ई-मेल—akhandjyoti@akhandjyotisansthan.org

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

आपको सादर प्रणाम

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel

Shantikunj Rishi Chintan को Subscribe करने के लिए क्लिक कीजिये और Bell 🔔 बटन को जरूर दबाएं ताकि आप को नोटिफिकेशन मिलते रहे।

Shantikunj Rishi Chintan के विडियो को अपने मित्रों के साथ शेयर जरूर करें।

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel के वीडियो युग निर्माण मिशन के लिए समर्पित है! हमारा एकमात्र उद्देश्य परम पूज्य गुरुदेव के विचारों को जन-जन तक पहुंचाने का है।

आप इन वीडियो को डाउनलोड करके मिशन की गरिमा के अनुरूप प्रयोग कर सकते हैं।

धन्यवाद

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

☞ शांतिकुंज हरिद्वार के Official WhatsApp Channel awgpofficial Shantikunj चैनल को Follow करने के लिए Link पर Click करें https://whatsapp.com/channel/0029VaBQpZm6hENhqlhg453J

Shantikunj WhatsApp:- शांतिकुंज की गतिविधियों से जुड़ने के लिए 8439014110 पर अपना नाम लिख कर WhatsApp करें

आप भी हमारे साथ जुड़ कर इस विचार क्रांति योजना में सहभागी अवश्य बनें।

Rishi Chintan